अध्याय : ३

यथार्थवाद के संदर्भ में 'झरोखे' और 'तमस'

===

अध्याय – 3

यथार्थवाद के सन्दर्भ में 'झरोखे' और 'तमस'

===

यथार्थवाद :–

आधुनिक विज्ञान की महत्वपूर्ण देन है 'यथार्थवाद'। उपन्यास विधा और यथार्थवाद का अत्यंत गहरा सम्बन्ध है। यथार्थवादी दार्शनिक चिंतकों ने यथार्थवाद का स्वरुप उपन्यास में अभिव्यक्त यथार्थवाद के आधारपर ही निर्धारित किया है। यथार्थवाद की व्याप्ति साहित्य के सभी रुपों में परिलक्षित होती है परंतु यथार्थवाद का पूरा उत्कर्ष कथासाहित्य विशेषतः उपन्यासों में देखा जा सकता है।

(1) यथार्थवाद : उद्‌भव और प्रसार :–

एक सशक्त आंदोलन और साहित्य और कलारचना की प्रधान दृष्टि के रुप में यथार्थवाद का जन्म ओर विकास फ्रान्स की सन् 1830 ई. की क्रांति के पश्चात हुआ है। क्रांति के पश्चात इसका फैलाव युरोप तथा अन्य देशों में हुआ। पूंजीवादी समाजव्यवस्था की नींव डालते हुए इस क्रांति ने प्रजातंत्र की स्थापना के साथ स्वच्छंदतावाद (रोमांटिसिज्म) के नए आंदोलन को भी जन्म दिया। सन 1855 ई. में 'कोर्वे' ने अपने चित्रों का प्रदर्शन किया। इन चित्रों में निरुपण शैली के संदर्भ में 'रियालिज्म' शब्द का प्रयोग कोर्वे ने किया था। 'फ्लावेयर' का उपन्यास 'मैडम बावेरी' सन 1856 ई. में प्रकाशित हुआ। यह तिथि भी यथार्थवादी कला आंदोलन का संकेत देती है। फ्लावेयर ने दूसरे साहित्यकारों को आवाहन किया कि वे दैनिक जीवन के सभी छोटे एवं नगण्य चित्रों को कला के द्वारा चित्रित करे। फ्लावेयर के साथ-साथ 'विक्टर ह्यू गो' ने अपने उपन्यास 'पैरिस का कुबडा' और 'अभागे' में निम्न स्तरीय उपेक्षित पात्रों की हीनावस्था का चित्रण करके इस दिशा में कुछ नये प्रयोग किए। जर्मनी में सर्वप्रथम 'गेटे' ने

मध्यमवर्गीय परिवार के नायक को सामाजिक स्तरपर लाकर खडा किया। ब्रिटन में 'स्काट' के ऐतिहासिक उपन्यासों द्वारा यथार्थतावाद का अच्छा प्रसार हुआ। फ्रान्स के 'स्तादल' ने पूँजीपति वर्ग के ऱ्हास का वर्णन अपने साहित्य में किया। 'बाल्जाक' पहला ऐसा व्यक्ति था जिसने दैनिक जीवन में नविनतम समस्याओं का महत्व समझकर उसका चित्रण अपने साहित्य में किया। फ्रान्स के पश्चात यथार्थवादी धारा का सच्च रुप रुस में प्रकट हुआ। 'टॉलस्टॅाय' ने अपने उपन्यासों में बाल्जाक की सभी समस्याओं को चित्रित किया। 'तुर्गनेव', 'डोस्टावस्की', 'गोर्की' आदि लेखकों ने अपने उपन्यासों में यथार्थवाद का सुन्दर एवं सजीव चित्रण किया। गोर्की ने सर्वहारा वर्ग का विस्तृत चित्रण अपने उपन्यास साहित्य में किया। स्वतंत्रता से पहले अंग्रेजी राज्य और अंग्रेजी शिक्षा के फैलाव के कारण हिन्दी के अनेक साहित्यिक युरोपीय साहित्य संपर्क में आए। हिन्दी में प्रेमचंद से लेकर आज तक अनेक साहित्यकारों ने अपने उपन्यासों में तथा साहित्य की दूसरी विधाओं में भी यथार्थवाद का चित्रण किया है।

(2) यथार्थवाद : उद्‌भव की पृष्ठभूमि :-

ज्ञान प्रक्रिया के मध्य वस्तुओं का स्वरुप परिवर्तित हो जाता है। अथवा संपूर्ण विश्व को अनुभवरुप मानना चाहिए इस दार्शनिक मान्यता के विरोध में, पाश्चात्य दर्शन क्षेत्र में यथार्थवादी विचारधारा का उद्‌भव हुआ। इस विचारधारा के विपरीत यथार्थवादी दार्शनिकों की स्थापना यह थी कि ज्ञान के विषय की यथार्थता को स्वतंत्र रखा जाए। अर्थात "ज्ञेय पदार्थो की सत्ता ज्ञाता से स्वतंत्र है।"[1] यथार्थवाद साहित्य में प्रचलित आदर्शवाद के विरोध की प्रतिक्रिया भी माना जा सकता है। क्योंकि आदर्शवाद और यथार्थवाद दोनों परस्पर विरोधी भावनाएँ हैं। स्वच्छंदतावाद की भावप्रवणता, काल्पनिकता, कृत्रिमता, अध्यात्मिकता, रहस्यात्मकता और मानवी जीवन से सम्बन्धहीनता के विरोध में यथार्थवाद का जन्म और विकास हुआ है। यथार्थवाद का अपना स्वतंत्र अस्तित्व और अपनी विचारधारा है। यथार्थवाद की इस विचारधारा और अस्तित्व को कायम करने में औद्योगीकरण से उत्पन्न व्यवस्थागत अन्तर्विरोध, डारविन और न्यूटन के वैज्ञानिक अविष्कार, सेंट साइमन, बेकन, फायरबाख, हर्जन, बेलेंस्की, चर्नेशवस्की, कार्ल मार्क्स, एंगेल्स आदि क्रांतिकारी दार्शनिकों के चिंतन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन्हीं

के विचारों के आधारपर साहित्य में यथार्थवादी विचारधारा का उदय हुआ।

सेंट साइमन ने अपनी कृतियों में दु:खी लोगों के जीवन का चित्रण करके उनके दु:खनिवारण की आवश्यकता व्यक्त की है। फायरबाख ने धर्म की आलोचना करते हुए आदर्शवादी और नीतिवादी धारणा पर आघात किया। फायरबाख के विचारों ने नैतिकता, धर्म, अध्यात्म तथा आदर्शों पर टिकी पूर्ववर्ती विचार धाराओं को इतिहास की वस्तु बनाकर यथार्थवादी चिंतन को एक सशक्त आधारभूमि प्रदान की। कार्ल मार्क्स और एंगेल्स ने अपने ग्रंथों के आधारपर सिध्द किया कि मनुष्य के सामाजिक जीवन में अर्थव्यवस्था अत्यंत महत्वपूर्ण है। कला, विज्ञान, धर्म, संस्कृति इनका अर्थ के बिना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। इनका कहना है कि समाज में शोषक और शोषित वर्गभेद समाप्त करने के लिए सत्ता का श्रमिकों के हाथ में होना आवश्यक है और सत्ता प्राप्त करने के लिए क्रांति आवश्यक है। कार्ल मार्क्स, एंगेल्स के इन विचारों से यथार्थवाद को ठोस दार्शनिक आधार प्राप्त हुआ है।

उपर्युक्त चिंतकों के अलावा 19 वी शताब्दी के वैज्ञानिक निष्कर्षो की यथार्थवाद के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस शताब्दी में मनुष्य की जीवन धारणा और अन्य विचारधारा में जो महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ उसमें डार्विन के विकासवाद सिध्दांत को प्रमुख स्थान है। विकासवाद के सिध्दांत ने जैसे मानव के उद्भव और विकास संबंधी पूर्ववर्ती मान्यताओं का टाट ही उलट दिया। "डार्विन ने मानव विकास का निरुपण करते हुए मनुष्य को पशु की ही विकसित नस्ल स्वीकार किया। फलतः आदर्शवादी विचारणा द्वारा निरुपित मनुष्य संबंधी दृष्टिकोण भी विज्ञान सम्मत तथ्यों के प्रकाश में सराहनीय हो गया। मनुष्य के संबंध में एक नए दृष्टिकोण का विकास हुआ और इस नए दृष्टिकोण ने जहाँ एक स्तर पर आदर्शवादी भाववादी विचारणा द्वारा अनुप्रेरित स्वच्छंदतावादी चेतना की लोकप्रियता को कम किया, वहाँ दूसरे स्तर पर यथार्थवाद को शक्ति प्रदान की।"[2] इसके फलस्वरुप आदर्शवाद और स्वच्छंदतावाद में अभिव्यक्त मनुष्य संबंधित धारणाएँ और भी विकसित हो गयी जिसके कारण यथार्थवाद को

अधिक शक्ति मिल गयी। सन 1839 ई. में फोटोग्राफी की कला विकसित हो गयी इसीकारण अनेक साहित्यकार अपने साहित्य के वर्णन में यथातथ्य के आग्रही हो गए। पत्रकारिता के क्षेत्र की यथातथ्यवादी शैली ने यथार्थवादी के शैली पक्ष को और अधिक प्रभावित किया। उपर्युक्त सभी परिस्थितियों को अपने में समाविष्ट करते हुए 19 वी शताब्दी के उत्तरार्ध में एक सशक्त साहित्य आंदोलन के रुप में यथार्थवाद का उद्भव हुआ। यथार्थवादी साहित्य अन्य साहित्य की अपेक्षा ठोस वैचारिक आधारपर प्रतिष्ठित है।

(3) यथार्थवाद : परिभाषा और व्याख्या :-

यथार्थवाद प्रमुखतः पाश्चात्य विचारधारा है। युरोप की भूमिपर ही यथार्थवाद का जन्म हुआ और विकास भी। अतः अनेक पाश्चात्य साहित्यकार, विद्वान आदि ने यथार्थवाद के सम्बन्धमें अपने मौलिक विचार स्पष्ट किए है। उनमें से कुछ प्रमुख निम्नप्रकार से है -

(1) हेवर्ड फास्ट :-

'यथार्थवाद वह साहित्यिक संश्लेषण है जो चुनाव तथा रचना के माध्यम से अपने वास्तविक विचारों को समुन्नत रुप में पाठकों के सम्मुख उपस्थित करता है।'[3]

(2) फ्लावेयर :-

'फ्लावेयर वस्तुगत दृष्टिकोण और जीवन के सामान्य पक्षों के महत्वपूर्ण उद्घाटन को यथार्थवाद की विशिष्ठता मानते है।'[4]

(3) हावेल :-

'हावेल ने सामान्य जीवन के यथार्थ को महत्व देते हुए नैतिक जीवन की आज्ञा को अनुचित माना है।'[5]

(4) एंगेल्स :-

एंगेल्स के अनुसार - 'यथार्थवाद' का आशय यह है कि लेखक विवरणों और ब्यौरो के सत्य प्रस्तुतीकरण के अलावा प्रतिनिधि पात्रों को प्रतिनिधि परिस्थितियों में सच्चाई के साथ चित्रित करे।'[6]

(5) <u>एमिल फागे</u> :-

'यथार्थवादी कला का तात्पर्य है जीवन और जगत को यथातथ्य और निष्पक्ष भाव से देखना और उसी प्रकार उनका चित्रण करना।'[7]

(6) <u>आर. एल. स्टीवेन्सन</u> :-

'यथार्थवाद का प्रश्न साहित्य में मुख्यता सत्य से अल्पांश भी सम्बन्ध नहीं रखता। बल्कि उसका सम्बन्ध रचना की कलात्मक शैली मात्र से है।'[8]

(7) <u>जोला</u> :-

'मानव का सामान्य तत्वों की भाँति अध्ययन करके उसकी प्रतिक्रिया को नोट करो। मेरे लिए प्रकृतिवादी एवं शरीर-विज्ञान सम्बन्धी क्रियाओं का विशेष महत्व है। मैं सिध्दांत निर्माण के स्थानपर इन्हीं नियमों का अनुगमन करना चाहता हूँ। मैं एक वैज्ञानिक की तरह तथ्यों और रहस्योद्घाटन करते समय वस्तुस्थिति के अभिज्ञान से संतुष्ट हूँ।"[9]

(8) <u>कजामियाँ</u> :-

'यथार्थवाद साहित्य में एक शैली नहीं बल्कि एक विचारधारा है।'[10]

(9) <u>जॉर्ज ल्युकाक्स</u> :-

ल्युकाक्स के विचारों को स्पष्ट करते हुए डॉ.त्रिभुवनसिंह लिखते हैं - "जार्ज ल्युकाक्स ने यथार्थवाद के अद्भूत संश्लेषण क्षमता को महत्व दिया है। जिसमें सामान्य एवं विशिष्ठ तथा चरित्र एवं परिस्थितियाँ सम्बध्द हो जाए। चरित्र की विशिष्ठता वैयक्तिक विशिष्ठता की मुखापेक्षी नहीं हैं, चरित्र को विशिष्ठता के लिए उसमें सभी ऐसे मानवीय एवं सामाजिक निर्णायक तत्वों का पूर्ण विकसित रुप में प्रस्तुत रहना आवश्यक है कि उनके आधार पर अभी अन्तर्निहित सम्भावनाओं का स्पष्टीकरण हो सके। जार्ज ल्युकाक्स के विचार से सच्चे यथार्थवादी साहित्य की यह प्रमुख विशेषता है कि लेखक बिना किसी भय अथवा पक्षपात के ईमानदारी के साथ जो कुछ भी अपने आसपास देखता है उसका चित्रण करें।"[11]

उपर्युक्त पाश्चात्य विद्वानों एवं साहित्यकारों के विचारों को देखने के बाद हम सार रुप से यह कह सकते हैं कि यथार्थवादी साहित्यकार अपने विचारों को चुनाव के माध्यम से व्यक्त करते हैं। यथार्थवादी साहित्यकार अपने आसपास जो कुछ अच्छा–बुरा, कुत्सित समाज में देखता है इसका यथातथ्य वर्णन अपने साहित्य में करता है। यथार्थवाद में मानव मन के मनोविश्लेषणात्मक चित्रण को स्थान नहीं के बराबर है। यथार्थवादी साहित्यकार जो कुछ देखता है उसका वर्णन बिना किसी भय अथवा पक्षपात तथा ईमानदारी के साथ अपने साहित्य में करता है। यथार्थवाद में सामाजिक परिवेश तथा मनोवैज्ञानिक तथ्यों को प्रधानता है। यथार्थवाद में हमारी दुर्बलता, विषमता और क्रूरताओं का नग्न चित्रण होता है। वास्तव में यथार्थवाद का लक्ष्य यह नहीं बल्कि यह तो यथार्थवाद के बारे में बना ली गई गलत धारणा है।

'यथार्थतावाद' के बारे में कुछ भारतीय विद्वान और साहित्यिकों ने भी अपने विचार स्पष्ट किए है। उनमें से कुछ निम्नप्रकार से है –

(1) <u>प्रेमचन्द</u> :–

यथार्थ और आदर्श के सम्बन्ध में प्रेमचन्द का दृष्टिकोण साम्यवादी था। इसलिए प्रेमचन्द ने लिखा है – "वही उपन्यास उच्च कोटि के समझे जाते हैं जहाँ यथार्थ ओर आदर्श का समावेश हो, उसे आप आदर्शोन्मुख यथार्थवाद कह सकते है। आदर्श सजीव बनाने ही के लिए यथार्थ का उपयोग होना चाहिए।"[12] प्रेमचन्द समझते है कि, यथार्थवाद हमारी क्रूरता, दुर्बलता, विषमता का नग्न चित्र होता है। इसीकारण यथार्थवाद हमको निराशावादी बनाता है, यथार्थवाद के कारण ही मानव चरित्रपर से हमारा विश्वास उठ जाता है, हमें अपने चारों तरफ बुराई ही नजर आती है।

(2) <u>जयशंकर प्रसाद</u> :–

"प्रसादजी का कहना है कि व्यापक दु:ख संकलित मानवता को स्पर्श करनेवाला साहित्य यथार्थवादी बन जाता है। इस यथार्थवादिता की दिशा में अभाव, पतन और वेदना के अंश प्रचूरता से होते हैं। ..यथार्थवादी पतन और स्खलन का भी मूल्यांकन करता है। वेदना से प्रेरित होकर जनसाधारण के अभाव और उसकी वास्तविक स्थिति तक पहुँचने का प्रयत्न

यथार्थवादी साहित्यकार करता है। यथार्थवाद का मूल भाव है वेदना। यथार्थवाद क्षूद्रो का ही नहीं महानों का भी है।"[13]

(3) पंडित नंददुलारे वाजपेयी :-

"यथार्थवाद वस्तुओं की पृथक सत्ता का समर्थक है। वह व्यष्टि की अपेक्षा समष्टि की ओर अधिक उन्मुख रहता है। यथार्थवाद का सम्बन्ध प्रस्तुत वस्तुजगत से है।"[14]

(4) आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी :-

"यथार्थवाद शब्द बहुत गलत फहमी का शिकार बन गया है। साहित्य में यथार्थवाद का प्रयोग नये सिरे से होने लगा है। यह अंग्रेजी शब्द "रियालिज्म" के तौल पर लिया गया है। यथार्थवाद का मूल सिध्दांत वस्तु को उसके यथार्थ रुप में चित्रित करता है। न तो उसका कल्पना के द्वारा विचित्र रंगों में अनुरंजित करना और न किसी धार्मिक या नैतिक आदर्श के लिए कॉट-छॉंटकर उपस्थित करना है।"[15]

इन विद्वानों के अलावा मार्क्स और फ्रायड ने भी यथार्थतावाद के चरित्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। फ्रायड ने यह सिध्द किया कि मनुष्य के जीवन का नेतृत्व मनुष्य की यौनशक्ति ही करती है, मनुष्य की यौन संतुष्टि के बिना उसका विकास असंभव है। फ्रायड के इस विश्लेषण का प्रभाव यथार्थवाद पर पड़ा है। मार्क्स ने इतिहास में मानव के वर्गद्वंद्व को सिध्द कर इस द्वंद्व से राहत का मार्ग भी बताया। मार्क्स ने सिध्द किया कि मानव जाति के आपसी संघर्ष के मूल में "अर्थ" रहा है। समाज में होनेवाले शोषक और शोषित वर्ग के संघर्ष का इतिहास मानवजाति का इतिहास है। मार्क्स का कथन सत्य पर आधारित था जिससे यथार्थवाद को ठोस सैध्दांतिक आधार प्राप्त हुआ। यथार्थवाद भी मनुष्य के वर्गसंघर्ष का मूल "अर्थ" को मानता है।

भारतीय विद्वानों के अनुसार यथार्थवाद का सम्बन्ध प्रत्यक्ष भौतिक जगत् से है। यथार्थवाद मानव जाति के दु:ख, पतन, प्रभाव, वेदना तथा मानवी समस्याओं का चित्रण करता है। इसके साथ-साथ मानव की दुर्बलता, विषमता, क्रूरता का चित्रण भी यथार्थवाद ही करता

है। मनुष्य के कुचरित्र का चित्रण यथार्थवाद में अधिकतर होता है।

(4) <u>यथार्थवाद : स्वरुप</u> :–

अनेक लोगों का मानना है कि यथार्थवादी आंदोलन पूर्ववर्ती विचारधारा की प्रतिक्रिया है। यथार्थवाद मात्र निषेध का आंदोलन तथा अस्वीकार का आंदोलन है। यथार्थवाद का जो रुप हमारे सामने आता है, उसमें इस पूर्ववर्ती विचारधारा के कुछ विधेयात्मक तत्व भी है। यथार्थवाद का स्वरुप स्पष्ट रुप से समझने के लिए हमें निम्नलिखित तत्वों को समझना आवश्यक है।

(क) <u>यथार्थ</u> :–

प्रत्यक्ष ज्ञान को यथार्थ कहते हैं। यथार्थ, जीवन और जगत के तथ्यों का संग्रह करता है। मन के विविध भावों को यथार्थ अविकृत और अरंजित रुप में प्रकट करता है। यथार्थ में वस्तु सत्य को अविकल रुप में प्रस्तुत करने की कोशिश की जाती है। बाबु गुलाबराय के नतानुसार, "यथार्थ वह है, जो नित्यप्रति हमारे सामने घटता है। उसमें पाप–पुण्य, सुख–दु:ख की धूप–छाँह का मिश्रण रहता है। .... वह संसार की कलुष–कालिमा पर भव्य आवरण नहीं डालना चाहता।"[16] इसप्रकार कलाकार की एक विशेष दृष्टि का नाम है "यथार्थ"। इसी यथार्थ के आधारपर ही यथार्थवाद का जन्म और विकास हुआ है।

(ख) <u>सत्य और यथार्थ</u> :–

किसी वस्तु के अर्न्तबाह्य स्वरुप का सत्य हमें तभी मिलता है, जब हम उस वस्तु को अतीत, वर्तमान और भविष्य की दृष्टि से देखते है। यथार्थ में पूर्ण सत्य नहीं रहता, बल्कि सत्य के केवल व्यावहारिक पहलू का ही मूल्यांकन होता है। यथार्थ में सत्य का अंश जरुर है, लेकिन वह पूर्ण सत्य नहीं है। परंतु यथार्थवादी साहित्यकारों ने यथार्थ में सत्य के अन्तनिष्ठ पहलू की उपेक्षा भी नहीं की है। इसी कारण प्रेमचंद भी कोरे यथार्थ का चित्रण करना योग्य नहीं मानते। और इसी कारण ही प्रेमचंद अपने साहित्य में आदर्श का भी चित्रण करते हैं।

(ग) <u>यथार्थ और आदर्श</u> :-

'आदर्श' के विरोध में 'यथार्थ' की कल्पना निर्माण हुआी है। इसलिए कहा जाता है कि यथार्थ और आदर्श दोनों परस्पर विरोधी तत्व हैं। विशेषत: यथार्थ की नजर वस्तु के वर्तमान रुप पर होती है ओर आदर्श की नजर वस्तु के भविष्य पर होती है। आदर्श वस्तु की ऐसी कल्पना क़रता है कि जिसमें वस्तु सुंदर, स्वच्छ, और पवित्र प्रतिभासित हो। यथार्थ वस्तु के गुण और सौंदर्य को ग्रहण कर उसके अवगुण को छोड़ देता है। आदर्श, यथार्थ को देखकर ही आदर्श की कल्पना करता है जिसके कारण आदर्श, यथार्थ पर ही आधारित हो जाता है। जो आदर्शवादी है वह यथार्थ को देखकर ही आदर्श की स्थापना करता है। यथार्ध और आदर्श एक दूसरे के परस्पर विरोधी होते हुए भी एक दूसरे पर आधारित है।

(घ) <u>आदर्शवाद और यथार्थवाद</u> :-

आदर्श और यथार्थ जिसप्रकार एक दूसरे के विरोधी है उसीप्रकार आदर्शवाद ओर यथार्थवाद परस्पर विरोधी विचारधाराएँ हैं। आदर्श और यथार्थ के आधारपर ही आदर्शवाद और यथार्थवाद की स्थापना हुई है। आदर्शवाद के दार्शनिक चिन्तन को लेकर यथार्थवाद आदर्शवाद का विरोध करता है। "दार्शनिक दृष्टि से यथार्थवाद वस्तु के स्वतंत्र अस्तित्व को मान्यता देता है। जबकि आदर्शवाद वस्तु के व्यक्त सत्य को न मानकर उस व्यक्त सत्य के परे उपस्थित उसकी भावात्मक सत्ता को वास्तविक मानता है।"[17] संसार और जीवन जो कुछ है इसपर यथार्थवाद विचार करता है, तो संसार और जीवन कैसा होना चाहिए इसपर आदर्शवाद विचार करता है। यदि आदर्शवाद की दृष्टि वर्तमान पर नहीं होगी तो उसका आदर्श आधारहीन और अप्रामाणिक ही होगा। यथार्थवाद ही आदर्शवाद का आधार है। इसीकारण आदर्शवादी साहित्यकार आदर्श का निर्माण करने से पहले यथार्थ पर ही सोचता है। अपनी तथा सामाजिक मान्यताओं के अनुसार आदर्शवाद जीवन के अच्छे पक्ष को स्वीकार करके, विकृत पक्ष का निषेध करता है। यथार्थवाद में यथार्थ का विश्लेषण किया जाता है, इसमें कोई सुझाव या संदेश नहीं दिया जाता, तो आदर्शवाद अपने आदर्श के भविष्य में प्राप्त करने का संदेश देता है।

(ङ) <u>यथार्थ और कल्पना तत्व</u> :-

जो वस्तु वास्तव या सत्य में नहीं उसकी सृष्टि कलाकार अपनी कल्पना में करता है। स्वच्छंदतावाद में कल्पना तत्व को अनन्यसाधारण महत्व है। कल्पना तत्व का आधार लेकर ही स्वच्छंदतावादी रचनाकारों ने धरती, आकाश, पाताल सभी जगहों पर विचरण किया और जीवन ऐसे तथ्यों तथा सत्यों से परिचित हुए जिन्हें कोई नहीं जानता। साहित्य या कला की मूलभूत प्रकृति में कल्पना तत्व स्वीकृत है परंतु इस कल्पना की स्थिति सर्वोच्च न होकर मध्यम रुप में है।

यथार्थ में कल्पना तत्व का निषेध नहीं हैं। कल्पना के अभाव में बाह्य यथार्थ की पुनर्रचना नहीं हो सकती। मन और बाह्य जगत के पदार्थों को व्यवस्थित करके उन्हें कलात्मकता देने का कार्य कल्पना शक्ति करती है, और इस चिंतन को यथार्थवादी भी स्वीकृति देता है। कल्पना तत्व के बिना यथार्थवाद अपना साहित्यिक और कलात्मक रुप स्थिर नहीं रख सकता। यथार्थवाद में यथार्थ वस्तु के अभाव में उसके बदले काम करनेवाली कल्पना को अस्वीकृत किया जाता है अथवा ऐसी कल्पना को अस्विकृत किया जाता है जिसे तर्कबुध्दि से उच्चतर कोटि की मानसिक शक्ति माना गया है। इसप्रकार यथार्थ, यथार्थवाद ओर कल्पनातत्व का निश्चित रुप से सम्बन्ध हैं।

(च) <u>यथार्थ और यथातथ्य</u> :-

विद्वानों और आलोचकों द्वारा यथार्थवाद पर आरोप लगाया जाता है कि यथार्थवादी रचनाकार अपनी कृतियों में बाह्य वास्तविकता को ज्यों का त्यों उतारने की चेष्टा करते है। संक्षेप में यथार्थवाद में वस्तु के बाह्य स्वरुप का यथातथ्य चित्रण किया गया है। परंतु यह आरोप ठीक नहीं है। यह ठीक है कि वास्तविकता का सत्य चित्रण यथार्थवाद की विशेषता है। "वास्तविकता के सत्य चित्रण में उसका जोर इस बात पर रहता है कि वास्तविकता तथ्य परक न होकर कला की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए कृति में अभिव्यक्त हो। वास्तविकता को हू-ब-हू कागज पर उतारना, यथार्थवादी दृष्टिकोण नहीं है, क्योंकि वास्तविकता

इतनी प्रशस्त, विराट ओर अनंत रुपात्मक है कि उसे हू–ब–हू उतारा भी नहीं जा सकता। यह रचनाकार का यथार्थवादी रचनाकार का लक्ष्य भी नहीं है।"[18] प्रेमचंद्र का अपना कृतित्व भी इस कथन को पुष्ट करता है कि यथार्थवादी रचनाकार कोरी यथातथ्यता पर विश्वास नहीं रखता। सच्ची यथार्थ दृष्टि वस्तुनिष्ठ होती है किन्तु रचनाकार अपने जीवनानुभवों को तराशकर उन्हें कलात्मक रुप देता है। यथार्थवादी रचना कलाकार की अपनी सृष्टि होती है। इसप्रकार यथार्थवाद में वस्तु का सिर्फ यथातथ्य वर्णन नहीं होता, उसमें लेखक की संवेदना, दृष्टि और मनस्थिति होती है।

(छ) यथार्थ और यथार्थतावाद का अन्तर :–

अन्य साहित्य विधाओं की अपेक्षा उपन्यास विधा से यथार्थवाद का गहरा सम्बन्ध है। सभी उपन्यासों में यथार्थ का चित्रण मिल सकता है लेकिन ऐसे सभी उपन्यासों को यथार्थवादी उपन्यास की संज्ञा नहीं दी जा सकती। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि कही न कही एक ऐसी सीमारेखा है जिससे यथार्थ ओर यथार्थवाद एक दूसरे से कुछ सीमा तक अलग होते हैं। यथार्थवाद में मार्क्सवादी दृष्टि स्पष्ट होती है लेकिन शैली एवं अभिव्यक्ति की कलात्मक दृष्टि से एक सीमा तक दोनों में अन्तर देखने को मिलता है। यथार्थ जीवन को चित्रित करता है। जीवन का प्रत्यक्ष ज्ञान यथार्थ और उसका अभिव्यक्तिकरण यथार्थवाद है। यथार्थ, यथार्थवादी का अनगढ रुप है। यथार्थवाद में कलात्मकता और मार्क्सवादी दृष्टि की प्रमुखता के साथ यथार्थ का चित्रण किया जाता है।

(ज) यथार्थ और विरुपता :–

यथार्थवाद के सम्बन्ध में एक गलत फहमी यह है कि यथार्थवाद जीवन के कुरुप, बीभत्स तथा घिनौने रुप का ही चित्रण करता है। यह गलत फहमी प्रकृतिवादी साहित्य के कारण निर्माण हुई है। जीवन सब कुछ सुंदर नहीं होतातो कुछ कुरुप और घिनौना भी होता है, इसीकारण भारतीय आचार्यों ने साहित्य के नवरसों में बीभत्स रस की भी गणना

की है। परंतु यथार्थवादी रचनाकारों ने जान–बूझकर वास्तविकता को विरुप नहीं किया है और मनुष्य को भी विरुप नहीं बनाया है। आलोचनात्मक यथार्थवाद में पूँजीवादी–सामन्तवादी समाजव्यवस्था की विकृतियों का चित्रण मिलता है परंतु उसमें भी सामान्य मनुष्यता की पीडा के प्रति गहन मानवीय संवेदना की स्थिति है, मानवीय विकृति के साथ-साथ मानवीय आकांक्षा का भी रुप उभारा गया है। समाजवादी यथार्थवाद में भी सर्वहारा वर्ग की क्रांति के रुप में नई वास्तविकता को उच्चतर मानवीय मूल्यों के रुप में उभारा गया है। इसलिए यथार्थवाद के बारे में उपर्युक्त जो गलत फहमी है वह सर्वथा भ्रामक हैं। यथार्थवादी रचनाकारों ने जीवन के कुरुप, बीभत्स पक्ष की निर्मम आलोचना की है। अतः यथार्थवाद पर विरुपता, घिनौनापन का आरोप लगानेवाले आलोचक वास्तविकता के साथ न्याय नहीं करते। अतः यथार्थवादी साहित्य मनुष्य को निराशावादी और नियतिवादी नहीं बनाता बल्कि वह मनुष्य को उसके परिवेश से परिचित कराते हुए विरुपता के प्रति सजग करता है।

(झ) यथार्थवाद और व्यक्ति का अंतरंग अथवा बहिरंग चित्रण अथवा "टाईप" बनाम व्यक्ति :–

यथार्थवाद में "टाईप" अथवा प्रतिनिधि पात्र होते हैं। और यह यथार्थवाद की प्रमुख विशेषता भी है। इसी विशेषता के आधारपर यथार्थवाद पर आरोप लगाया जाता है कि यथार्थवाद में व्यक्ति जीवन की उपेक्षा की जाती है। यथार्थवादी रचनाकारों ने पात्र का अंतरंग विश्लेषण नहीं किया हैं। परंतु सच्चा यथार्थवाद मनुष्य के चरित्र और क्रियाकलापों को अंतरंग और बहिरंग दायरे में विभाजित नहीं करता। जार्ज ल्युकाक्स के अनुसार "टाईप" अर्थात प्रतिनिधि पात्रों के महत्व का अर्थ यह नहीं है कि उसके अंतर्गत व्यक्ति का वैशिष्टय हो जाता है, वरन सच्चे "टाईप" या प्रतिनिधि पात्र में सामान्य तथा विशेष दोनों दूध–पानी की तरह एकसाथ रहते हैं। जो बात प्रतिनिधि को सही अर्थों में प्रतिनिधि बनाती है, वह न तो उसका औसत गुण है, और न उसकी व्यक्तिगत सत्ता, उसे कितनी ही गहराई में क्यों न देखा गया हो। वह प्रतिनिधि इसलिए है कि उसके अन्तर्गत मानवीय और सामाजिक दृष्टि से अनिवार्य सारे अवधारक तत्व,

अपने भीतर निहित संभावनाओं के अंततः पूरी तरह होनेवाले उद्घाटन एवं अपनी चरम भूमिका की चरम अभिव्यक्ति के कारण अपने विकास के उच्चतम स्तरों के साथ विद्यमान रहते हैं और इस क्रम में मनुष्यों तथा युगों की सीमाओं तथा शिखरों को मूर्त कर देते हैं। इसप्रकार सच्चा या महान यथार्थवाद मनुष्य या समाज के मात्र इन या उन पक्षों को दिखाने की बजाय उन्हें उनकी समग्रता में संपूर्ण और समग्र इकाईयों के रुप में चित्रित करता है।"[19] यथार्थतावाद का साध्य है सम्पूर्ण मानव व्यक्तित्व का उद्घाटन और इस साध्य के अन्तर्गत मानव–व्यक्तित्व का अन्तरंग और बहिरंग दोनों पक्ष समाविष्ट हैं। यथार्थवाद में पात्र की अन्तरंगता सामाजिकता का सन्दर्भ लिए हुई है। यथार्थवाद पात्र की मानसिक विकृति की खोज उसके सामाजिक जीवन की असंगति में ढूँढता है, यही यथार्थवाद का वैशिष्ट्य है।

(5) <u>यथार्थवाद की प्रवृत्तियाँ</u> :–

यथार्थवाद की परिभाषाएँ तथा चरित्र देखने के पश्चात यथार्थवाद को प्रवृत्तियाँ हमारे सामने स्पष्ट होती है। यथार्थवाद सत्य की खोज से उत्पन्न हुआी प्रवृत्ति है, यथार्थवाद सत्यानुभूति से प्रेरित चित्रण पर बल देता है। यथार्थवाद में मानव और समाज का पूर्ण रुप से चित्रण होता है और वह मानव तथा समाज की कुछ विशेषताओं के चित्रण के प्रति अनास्था व्यक्त करता है। यथार्थवाद सामायिक परिस्थितियों पर बल देकर उन्हें कल्पना के माध्यम द्वारा सत्य ढंग से प्रस्तुत करता है। यथार्थवाद मनुष्य की पूर्णता एवं व्यक्ति तथा परिस्थिति की विसंगति का पूर्ण चित्रण करता है। "मानव जीवन की कुण्ठाएँ, वर्जनाएँ एवं असंतोषप्रद स्थितियों की भयंकरता से यथार्थवाद मुख नहीं मोडता, उनका साहस के साथ चित्रण करता है।"[20] कट्टर सामाजिक व्यवस्था, रुढियाँ, अंधविश्वास आदि के प्रति भी यथार्थवाद अनास्था दिखाता है। "यथार्थवाद समाज के उच्चवर्ग के साथ ही मध्यमवर्गीय और निम्नवर्गीय व्यक्तियों का भी चित्रण करता है। लेकिन इस चित्रण में निम्न और मध्यवर्ग का चित्रण प्रधान रुप से करता है।"[21] यथार्थवाद की शैली बौध्दिक एवं वैज्ञानिक अधिक है। यथार्थवाद का अन्तिम लक्ष्य मानव को सहि रुप में मानव बनाना होता है। यथार्थवाद स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर उन्मुख रहकर परिवर्तनशील परिस्थितियों तथा वैचारिक दृष्टिकोणों से प्रेरणा

ग्रहण करता है और कला को नवीन वातवरण में गतिशील करता है। समाज की विषमता, असंगति, वेदना, पीडा, दुर्बलता का चित्रण यथार्थवाद करता है। यथार्थवादी कलाकार, साहित्यकार का दृष्टिकोण भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक होता है। यथार्थवाद के पात्र भी अधिक सामाजिक होते है। यथार्थवाद का सत्य लौकिक सत्य से अधिक निकट होता है। यथार्थवाद "अर्थ" को मनुष्य के संघर्ष का मूल कारण मानता है, जिससे यथार्थवाद का मार्क्सवादी दृष्टिकोण स्पष्ट होता है। यथार्थवादी साहित्यकार समाज के विवरणों और ब्यौरों के सत्य परिस्थितियों में सच्चाई के साथ चित्रित करता है। यथार्थवाद का प्रमुख आधार यथार्थ जीवन के प्रति वस्तुपरक दृष्टि है। "यथार्थवाद समाज की प्रमुख एवं ज्वलन्त समस्याओं को ही अपने चित्रण के लिए चुनता है और समकालिन मानवीय घुटन, पीडाओं आदि के यथार्थ चित्रण में ही उसकी लेखकीय स्थिति सदृढ रहती है। यथार्थवाद की दृष्टि तथ्यात्मक है। तथ्य विज्ञान पर आधारित होते है और इन्हीं तथ्यों का अन्वेषण करना यथार्थवाद की प्रमुख प्रवृत्ति होती है।"[22]

(6) <u>यथार्थवाद के प्रकार</u> :-

अनेक लेखकों, विद्वानों के दृष्टिकोण के आधारपर यथार्थवाद के अनेक प्रकार बनाए गए है। वास्तव में यथार्थवाद एक जीवन दृष्टि है। इसी दृष्टि से प्रेरित होकर उपन्यासकार यथार्थ का चित्रण करता है। अगर हम पाश्चात्य और भारतीय उपन्यासों को देखें तो यथार्थवाद के अनेक प्रकार सामने आते हैं।

(क) <u>ऐतिहासिक यथार्थतावाद</u> :-

साहित्य में यथार्थवाद और ऐतिहासिक यथार्थवाद में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। देशकाल का अन्तर आ जाने के कारण यथार्थवाद ही ऐतिहासिक यथार्थवाद कहा जाने लगा है। ऐतिहासिक यथार्थवाद उस समय की सामाजिक परिस्थितियों को उभारकर रखने के प्रति आग्रही होता है। ऐतिहासिक यथार्थवाद तत्कालिन समाज के ऐसे चरित्रों की रचना करता है जिससे आनेवाले वर्तमान समाज को प्रेरणा मिले तथा उस परिवेश के दोष, दुर्बलताएँ भी बताता है जिससे आनेवाला वर्तमान समाज अपनी उन्हीं दुर्बलताओं और दोषों से बच सके।

"ऐतिहासिक यथार्थवाद तिथियों, नामों एवं घटनाओं की सत्यता के प्रति अधिक आग्रहशील नहीं रहता पर तत्कालिन सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवन के यथार्थ चित्रण पर बल देता है।"[23] "ऐतिहासिक यथार्थ की एकमात्र कसौटी है लेखक की निष्पक्ष दृष्टि का होना। यदि लेखक ऐतिहासिक यथार्थ का चित्रण करते समय अपने वैयक्तिक आग्रहों से ऊपर नहीं उठ पाया तो उसकी रचना में विकार का आना स्वाभाविक है।"[24] ऐतिहासिक यथार्थ की सृष्टि सोद्देश्य की जाती है जिससे वर्तमान समाज अतीत का गौरव समझ ले और अपने समाज की दुर्बलता एवं दोष को भी समझ ले।

(ख) आदर्शोन्मुख यथार्थवाद :–

भारतीय जीवन में आदर्शवाद की प्रवृत्ति रही है और भारतीय दर्शन की परम्परा भी सदैव आदर्शवादी रही है। आदर्श और यथार्थ का परस्पर समन्वित रुप ही आदर्शोन्मुख यथार्थवाद है। इसमें यथार्थ चित्रण करते हुए अन्त में आदर्श की प्रतिष्ठा की जाती है। आदर्शवादी साहित्यकारों ने यथार्थ के साथ यह समझौता किया है। प्रेमचंदजी के लगभग सारे उपन्यास आदर्शोन्मुख यथार्थवादी रहे हैं। मानव जीवन के बीभत्स, असंगत, कुत्सित, विडम्बनापूर्ण पक्ष का चित्रण करते हुए भी आदर्शोन्मुख यथार्थ मानव के सामने ऐसे आदर्श की स्थापना करता है, जिसमें आशा और विश्वास का संचार होता है।

(ग) मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद :–

मनौवैज्ञानिक यथार्थवाद मानव की बौध्दिकता तथा भावनात्मकता का अधिक चित्रण करता है। मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद मानव के अचेतन मन का भी यथा तथ्य रहस्योद्घाटन करता है। यह अचेतन मन अधिक शक्तिशाली होता है ओर प्रत्येक नियंत्रण एवं सीमाओं को अस्वीकृत करता है। अचेतन मन के लिए सभ्यता, संस्कृति, श्लीलता का आग्रह अर्थहीन है परन्तु चेतन मन के लिए वह प्रवृत्ति आवश्यक है जिससे विरोधाभास एवं कटुता की स्थिति उत्पन्न होती है, जिसका चित्रण एवं प्रकाशन मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद करता है। मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद मानव मन की जटिल एवं विषम ग्रंथियों को सुलझाने का कार्य करता है।

परंतु यह कार्य करते हुए वह मनुष्य की विकृति, घृणा, अश्लीलता आदि का भी चित्रण करने में व्यस्त हो गया। डॉ.देवराज, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय आदि हिंदी के प्रमुख मनावैज्ञानिक यथार्थवादी साहित्यकार है।

(घ) आलोचनात्मक यथार्थवाद :-

आलोचनात्मक यथार्थवाद को यथार्थवाद से अलग रखना अत्यंत कठिन है। आलोचनात्मक यथार्थवाद और यथार्थवाद में थोडा सा ही अंतर है। आलोचनात्मक यथार्थवादी रचनाकार तथ्यों का निरपेक्ष एवं पूर्णतया चित्रण करते हुए एक कदम आगे बढकर समाज की विकृतियाँ, कुरुपता, विषमता आदि की कठोर आलोचना करता है। आलोचनात्मक यथार्थवादी रचनाकार उपदेशक होकर भी वह उपदेशक के रुप में हमारे सामने नहीं आते। हिन्दी उपेन्द्रनाथ अश्क आलोचनात्मक यथार्थवादी रचनाकार हैं।

(ड़) समाजवादी यथार्थवाद :-.

समाजवाद से प्रभावित और प्रेरित यथार्थवाद समाजवादी यथार्थवाद है। मार्क्सवाद के समग्र क्रांति की उद्देश्यवादिता, आर्थिक समता, पूँजीवाद का विरोध, सामाजिक समग्रता और समाजवादी समाज की स्थापना आदि समाजवादी यथार्थवाद की प्रमुख विशेषताएँ हैं। "समाजवादी विचारधारा से प्रभावित होकर यथार्थवाद का विस्तृत चित्रण करना समाजवादी यथार्थवाद कहलाता हैं। समाजवादी यथार्थवादी, इसलिए समाज और उसकी समष्टिगत चेतना से सम्बन्धित है। यह सामाजिक जनक्रांति से अधिक प्रभावित है। तथा वास्तविक चित्रण के साथ सामाजिक संघर्षों के यथार्थ चित्रण पर बल देता है।"[25]

(च) अतियथार्थवाद :-

अतियथार्थवाद का इतिहास मूलतः मूर्तिकला के माध्यम से हुआ है। अतियथार्थवाद को हम प्राकृतवाद की चरम अभिव्यक्ति कह सकते हैं। समालोचकों ने अवचेतन मन की विलासलीला को ही अतियथार्थवाद के नाम से अभिव्यक्त किया है। मनुष्य के अन्दर विलास की प्रबल ज्वाला धधकती रहती है, वह जीवन में विलास की प्रत्येक वस्तु का आनन्द

उपभोगना चाहता है। मनुष्य नारी को भोग की वस्तु मानकर उसका चित्रण करता है। अतियथार्थवादी रचनाकार कला में बौध्दिकता के स्थानपर कल्पना को विशेष महत्व देते है। इसमें मानवीय विकृति, बीभत्सता के ऐसे चित्र उपस्थिति किए कि जिससे मानव विकृति का पूतला मात्र बन गया। हिंसा और न्युरोटिक प्रवृत्तियों के चित्र उभारने के कारण यह जल्दी ही निन्दनीय समझा जाने लगा। हिन्दी उपन्यासों में अतियथार्थवाद को आज तक अधिक प्रोत्साहन नहीं मिला।

(छ)प्राकृतवाद :-

डार्विन के विकासवाद के सिध्दांतपर ही प्राकृतवाद का निर्माण हुआ। इसके अनुसार मनुष्य भी पशुजन्य है। यह मनुष्य के स्वार्थ, निर्दय और कामुक प्रवृत्ति का चित्रण करता है। प्राकृतवाद मनुष्य की कुण्ठित भावना, निराशा, अस्वस्थता, गन्दगी का चित्रण करता है। यथार्थवादी दृष्टिकोण से प्रभावित होकर ही उपन्यास जीवन का वास्तविक चित्रण करता है। डॉ.हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार "कला के क्षेत्र में यथार्थवाद एक ऐसी मानसिक प्रवृत्ति है जो निरन्तर अवस्था के अनुकूल परिवर्तित और रुपायित होती रहती है।"[26] इसलिए कहा गया है कि यथार्थवाद एक जीवनदृष्टि है। इस जीवन दृष्टि से प्रभावित होकर उपन्यासकार यथार्थ का चित्रण करता है।

(ज) राजनीतिक यथार्थवाद :-

राजनीति समाज का एक अंग है ओर सामाजिक जीवन के यथार्थ राजनीति का चित्रण राजनीतिक यथार्थवाद है। इसमें राजनीति में सक्रीय प्रतिनिधि पात्रों और जनसामान्य का चित्रण किया जाता है। राजनीतिक यथार्थवाद में राष्ट्रीय राजनीति की समस्याएँ, राजनीति का विकृत स्वरुप, उसकी शोषक नीति, जनसामान्य पर राजनीति का प्रभाव, राजनेताओं का चरित्र और स्वार्थ, राजनीति के हथकण्डों में पिसता मानव समाज, राजनेताओं की दूर्बलता, अमीर लोगों का राजनीतिपर बढता प्रभाव, पूँजीपतियों के साथ राजनेताओं की सॉंठ-गाँठ, किसी विशिष्ट समाज को आपस में तथा दूसरें के साथ लडाने के लिए राजनीति का दुरुपयोग आदि

का विस्तृत चित्रण इसमें किया जाता है। राजनीतिक यथार्थवाद में राजनीतिक परिवेश महत्वपूर्ण होता है। किसी एक उपन्यास में राजनीतिक यथार्थवाद पूर्ण रुप से उभरना कठिन होता है। उपन्यास में राजनीति का यथार्थ चित्रण किया जाता है। इसमें राजनेता का आडम्बर, षड्यंत्र, राजकीय पार्टियों की आपस में खींचातानी, जनता को फँसाने की नीति आदि भी वर्णित की जाती है। समाज के पूरे राजनीतिक यथार्थ का चित्रण राजनीतिक यथार्थवाद में होता है। राजनीतिक यथार्थवादी रचनाकार यह नहीं बताता कि राजनीति कैसी होनी चाहिए, बल्कि वह यह बताता है कि राजनीति कैसी है। इसीकारण पाठक तथा समाज जान जाता है कि राजनीति का असली स्वरुप क्या है। हिन्दी में प्रेमचन्द का 'रंगभूमि', यशपाला का 'झूठा–सच', अमृतलाल नागर का 'महाकाल', रांगेय राघव का 'टेढे–मेढे रास्ते', राहुल सांकृत्यायन का 'जीने के लिए', विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक का 'संघर्ष' आदि अनेक उपन्यास राजनीतिक यथार्थवाद अपने में बडी मात्रा में लिए हुए हैं।

(झ) <u>सामाजिक यथार्थवाद</u> :–

"सामाजिक यथार्थवाद का अर्थ है समाज की वास्तविक अवस्था का यथार्थ चित्रण।"[27] यह सामाजिक यथार्थवाद, यथार्थवाद का एक अभिन्न अंग है, इसे यथार्थवाद से अलग नहीं किया जा सकता। समाज की आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक शक्तियाँ एवं समस्याएँ ही सामाजिक यथार्थवाद के अन्तर्गत आती है। सामाजिक यथार्थवादी रचनाकार समाज की धार्मिक मान्यताएँ, अन्धविश्वास का यथार्थ चित्रण कर उनपर गहरी चोट भी करता है। समाजवादी रचनाकार सामान्य जनता की वेदना, दुःख, पीडा, का चित्रण करते हुए शोषित वर्ग के शोषिक चरित्र को बेनकाब करता है। वह समाज की समस्याओं का विस्तृत रुप में चित्रण करता है। सामाजिक यथार्थवाद दैवी शक्तियाँ तथा धर्म पर अविश्वास दिखाता है। सामाजिक यथार्थवादी रचनाकार समाज की दुर्बलता दिखाता है। वह समाज की साधारण से साधारण घटना के चित्रण में रस लेता है। सामाजिक यथार्थवादी रचनाकार एक अलग स्तर पर अवश्यम्भावित्व की स्थापना करता है, इसीकारण उसके चरित्र जिवंत एवं वास्तव लगते हैं। सामाजिक यथार्थवाद वस्तुतः प्रतिनिधि व्यक्तित्व अथवा चरित्र को

स्वाभाविक रुप में चित्रित करता है। सामाजिक यथार्थवाद के विकास में मार्क्सवाद का बहुत सहयोग रहा है। सामाजिक यथार्थवाद वर्गविभक्त समाज का यथार्थ चित्रण करता है। वह सुंदर अंश को छोडकर कुरुप अंश का अधिक चित्रण करता है।

सभी देशों के साहित्य में सामाजिक यथार्थवादी प्रवृत्तियाँ मिलती है। हिन्दी के सामाजिक यथार्थवादी रचनाकारों में दिनकर, रांगेय राघव, यशपाल, प्रेमचंद, नागार्जुन आदि रचनाकारों के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

(ण) साम्प्रदायिक यथार्थवाद :-

सम्प्रदाय, साम्प्रदायिक, साम्प्रदायवाद, साम्प्रदायवादी आदि शब्द एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। कोई विशेष धर्म संबंधी मत, किसी मत के अनुयायियों की जो एक हो धर्म को मानते हो, उनकी परिपाटी, चाल, रीति , प्रथा, प्रणाली आदि सम्प्रदाय है। अपने सम्प्रदाय को श्रेष्ठ समझनेवाले तथा अन्य सम्प्रदाय को हीन समझनेवाले सम्प्रदायवादी होते हैं।

धर्म और साम्प्रदायिकता का गहरा रिश्ता है। प्रायः साम्प्रदायिकता धर्म को ही अपना आधार बनाती है। दुनिया में अनेक धर्म हैं और समकालीन दुनिया में यह सभी धर्म सक्रिय हैं। इसीकारण साम्प्रदायिकता की समस्या विश्व में पुराने जमाने से आज तक बनी रही हैं। साम्प्रदायिकता लोगों को स्वतंत्रता के मार्ग से लेकर कभी राष्ट्रवाद का रुख अपनाती है तो कभी धर्मनिरपेक्षता पर गहरी चोटें करती हैं। साम्प्रदायिकता यथार्थवाद में रचनाकार साम्प्रदायिक परिवेश और साम्प्रदायिकता की समस्या के विभिन्न पहलू जैसे - सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक आदि पहलूओं का चित्रण करते हुए साम्प्रदायिकता के मूल में जाने का प्रयत्न यथार्थवादी रचनाकार करता है। रचनाकार हमेशा सम्प्रदायवाद का चित्रण तो करता है परंतु उसका कोई समाधान देने की कोशिश नहीं करता। वह साम्प्रदायिकता के परिणाम बताता है। हिन्दी में भीष्म साहनी जी ने अपने उपन्यासों में साम्प्रदायिक यथार्थवाद का विस्तृत चित्रण किया है।

यथार्थवाद के उपर्युक्त सभी प्रकारों का देखने के बाद हम यथार्थवाद के सम्बन्ध में यह कह सकते हैं कि यथार्थवाद साहित्य की एक महत्वपूर्ण विचारधारा है। यथार्थवाद एक गतिशील प्रक्रिया है। वह मनुष्य की धार्मिक और नैतिक मान्यताओं का विरोध कर मनुष्य का भौतिक परिवेश में यथार्थ चित्रण करता है। यथार्थवाद में समाज की भ्रष्टता, कुरुपता, असंगति और विडम्बनापूर्ण जिन्दगी का वास्तव चित्रण होता है। वह समसामायिक परिवेश में प्रतिनिधि पात्रों के माध्यम से समाज का यथार्थ चित्रण करता है, उसकी दृष्टि भविष्य पर नहीं, वर्तमान पर होती है। यथार्थवाद की शैली बौध्दिक एवं वैज्ञानिक अधिक है।

अतः उपन्यास साहित्य और यथार्थवाद का एक अटूट रिश्ता है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में भी यथार्थवाद का चित्रण विस्तृत रुप में मिलता है। अंत में हम कह सकते है कि, यथार्थवाद का चरम विकास उपन्यास–साहित्य में हुआ हैं।

यथार्थवाद के बारे में उपर्युक्त जानकारी देखने के पश्चात् अगर हम भीष्म साहनी के उपन्यास 'झरोखे' और 'तमस' को यथार्थवाद की दृष्टि से देखें तो यथार्थवाद के निम्नलिखित प्रकार हमारे सामने आते हैं –

(1) सामाजिक यथार्थवाद

(2) राजनीतिक यथार्थवाद

(3) साम्प्रदायिक यथार्थतावाद

उपुर्यक्त तीनों प्रकारों में भी 'झरोखे' में सामाजिक यथार्थवाद और 'तमस' में राजनीतिक और साम्प्रदायिक यथार्थवाद की प्रमुखता रही हैं।

<u>'झरोखे' और 'तमस' में सामाजिक यथार्थवाद</u> :–

भीष्म साहनी यथार्थवादी रचनाकार हैं। अपने जीवन अनुभव के बल पर भीष्मजी ने सामाजिक परिस्थिति का यथार्थ चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। सामाजिक यथार्थवाद के निम्नलिखित पहलू भीष्मजी के उपन्यासों में आते है –

(1) धर्म और दर्शन का कुप्रभाव :-

पिछली अनेक सदियों से धर्म और दर्शन का प्रभाव भारतीय जनमानस पर रहा है, जो आज तक कायम है। कभी कभी यह धर्म व्यक्ति के विकास में बाधा भी बन गया है। भीष्म साहनीजी ने धर्म के कुप्रभाव को स्वयं देखा और अनुभव किया है। 'झरोखे' उपन्यास में आपने अपने ही परिवार का चित्रण किया है। परिवार के सदस्य संध्या, उपासना, पूजा-पाठ, हवन, गायत्री मंत्र जप आदि धार्मिक क्रियाओं में मग्न रहते हैं। परिवार पर आर्यसमाज के संस्कार हैं और आर्यसमाज का गहरा प्रभाव सदस्यों पर पड़ा है। परिवार के बच्चों को बचपन से ही मोतीराम के बारहमासे के गीत सुनाये जाते हैं। रागात्मक संबंधों को तोड़ने का प्रयत्न बचपन से ही आरंभ होता है। परिवार के सबसे प्रमुख सदस्य है, पिताजी, जो बच्चो को मंत्र, संध्या, पूजा, हवन के लिए प्रेरित करते हैं। प्राचीन नैतिक बंधनों को अनुशासन न माना जाता है। इस अनुशासन में उन्मुक्त होकर हँसना भी असभ्यता का लक्षण माना जाता है। घर में जब दोनों बहनें हँसती है, तो उन्हें हँसने के लिए मना किया जाता है। परिवार में दोनों लड़कों को बचपन से ही ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी जाती है। स्त्रियों के प्रति गैर मनोवैज्ञानिक दृष्टि दी जाती है। बच्चों को पेशाबवाली जगह को हाथ न लगाने के लिए कहा जाता है। पिताजी की तरह ही बच्चों को पढ़ानेवाला पंडित भी बच्चों को ऐसी ही ब्रह्मचर्य की घिसी-पिटी बातें बताता है। बच्चों में बचपन से ही औरत और लिंग के प्रति घृणा और भय निर्माण किया जाता है। इसी शिक्षा के कारण गुरुकुल समाज के पास बैठे आदमी को देखकर बच्चों के मन में विचार आता है कि, "वह आदमी जो गुरुकुल समाज के पास, नाले के किनारे बैठा रहता है, जिसकी दोनों टाँगे सूजी हैं, और उन पर तेल चुपडा रहता है, वह जरुर अपनी पेशाबवाली जगह को हाथ लगाता रहा होगा, तभी उसकी टाँगे सूज गई है और उनपर कीड़े रेंगते नजर आते हैं। और वह लँगडा फकीर भी जो टेढ़ा चलता हुआ हमारे मुहल्ले में आता है, वह भी 23 अपने माँ-बाप की तरह बच्चे भी जाप-प्राणायाम करते हैं परंतु उसमें बच्चों का मन नहीं लगता। इसलिए उन्हें जताया जाता है कि प्राणायाम में ध्यान लगाने के लिए अपने नाक की नोकपर ध्यान लगाना चाहिए। परंतु बालक जब अपनी नाक की नोक पर ध्यान लगाता है

तो उसे कभी भाई, पिताजी, पंडितजी की नाक उसकी आँखों के सामने आती है।

स्त्री और सेक्स के बारे में गैरमनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण बच्चों को दिया जाता है। बच्चों को बताया जाता है कि अपने लिंग को हाथ लगाना पाप और दुराचार है, स्त्री का चेहरा देखना भी पाप है। इसीकारण सिनेमा की नायिका को देखकर भीष्मजी को लगता है – "मैं आँखे फाड़–फाड़कर एक औरत के चेहरे को देखे जा रहा हूँ जबकि 'अमृत–बिंदू' में साफ लिखा है ...। मैं उस पर से आँखें हटाने के लिए नीचे देखने लगता हूँ, पर आँखें खिंची हुई स्टेज की ओर मुड़ जाती हैं। इतनी बिकट स्थिति का सामना मुझे पहले कभी भी नहीं करना पड़ा है। ऐसी सुंदर स्त्री मैंने पहले कभी नहीं देखी है।"[29] किशोर लड़कों का वीर्यपात होना स्वाभाविक है। परंतु वीर्यपात होनेपर बालक के मन में पाप की भावना निर्माण होती है। वह पुस्तकों से औरत के चित्र फाड देता है। इसप्रकार भय और पीडा से निर्मित संस्कार अमानवीय होता है, वह चरित्र हत्या करनेवाला होता है साथ ही छल–कपट को और पाखंड को भी बढानेवाला होता है। मुहल्ले में मुसलमान लोगों के घर जब बकरी की सिरी भुनी जाती है तो इधर हिन्दू परिवार में हवन किया जाता है। बालक भीष्म और उनके भाई–बहन मुसलमान लोगों का द्वेष करते हैं। घर में हवन करनेपर नौकर तुलसी कहता है, "हवन की पवित्र आहुतियों से जो धुआँ उठेगा वह पापी 'म्लेच्छों'के गंदे धुएँ को खत्म कर देगा।"[30] भीष्मजी के घर मुसलमान व्यापारी आते हैं, परंतु उनके खानपान के लिए घर में एक जगह अलग से कुछ बर्तन रखे गए हैं, जो सिर्फ मुसलमान व्यापारियों के लिए इस्तमाल किये जाते हैं। मुसलमान व्यापारी जब चले जाते हैं तो माँ उन बर्तनों का जलते अंगारे और गरम राख से साफ करके रखती है। अपने स्वार्थ के कारण पिताजी मुसलमान व्यापारियों के साथ दोस्ती करते हैं और मुहल्ले के मुसलमानों का द्वेष करते हैं। वे जानते हैं कि व्यापार को कोई जाति नहीं होती। हिन्दू लोग अपने बच्चों को भी मुसलमान म्लेच्छों से दूर रखते हैं। यहाँ पर धर्म और दर्शन का अर्थ साम्प्रदायिक अर्थ में किया जाता है, जिससे मानव को मानव के रुप में न देखकर उसी किसी सम्प्रदाय का घटक समझा जाता है, उसका द्वेष किया जाता है। उपन्यास में तुलसी

को समझाया जाता है कि अगर वह भी हवन, संध्या करेगा तो आर्यवीर बनेगा। तुलसी अपनी बुध्दि से हवन, संध्या, मंत्र, वैद्यगिरी सब कुछ सीखता है, परंतु उसकी सामाजिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता। वह अन्त तक नौकर ही बना रहता है।

'तमस' उपन्यास में भी धर्म और दर्शन के नामपर सामान्य जनता को साम्प्रदायिकता की आग में ढकेल दिया जाता है। वानप्रस्थीजी पहले तो लोगों को शांति का उपदेश देते हैं। यही वानप्रस्थीजी धर्म के नाम पर मुसलमानों के खिलाफ साम्प्रदायिकता के बीज बो देते हैं।

धार्मिक–दार्शनिक उन्माद के कारण राष्ट्रीय संस्कृति का विचार घोर साम्प्रदायिक हो जाता है। भीष्मजी के लिए दर्शन वह सक्रिय स्फूर्ति हैं, जिनमें वस्तु को देखा, समझा और विश्लेषित किया जा सकता है।

(2) <u>धार्मिक पाखण्ड</u> :–

भीष्म साहनीजी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से धार्मिक पाखण्ड के मूल में निहित स्वार्थी भावना की पोल खोल दी है। यह धार्मिक पाखण्ड 'झरोखे' में भी देखा जा सकता है। आर्यसमाजी लोग यज्ञोपवित के समय गुरुदक्षिणा लेने की प्रथा को सुन्दर समझते हैं। पिताजी भी मानते है कि गुरुदक्षिणा पर गुरु का ही अधिकार होता है। परंतु भीष्मजी की माँ को पंडित का सारे पैसे गुरुदक्षिणा के रुप में उठा ले जाना अच्छा नहीं लगता। परंतु पंडितजी के लौटकर आनेपर वह उन्हें हाथ जोडती है और खाना खाने के लिए देती है।

'तमस' उपन्यास का सरदार तेजसिंह धार्मिक पाखंड का एक नमुना है। वह तुर्कों से पंथ की रक्षा, करने के लिए गरीब सरदार और उनके बीवी बच्चों की कुर्बानी माँगते हैं, औरतों के गहने भी पंथ की रक्षा के लिए लेते हैं। इन्हीं भावनाओं को लेकर उनके मस्तिष्क में सुनहरी धूल–सी उडती रहती है, उनकी यही मस्ती है, यही वजुद है। परंतु तुर्क जब समझौते के लिए दो लाख रुपये की अदायगी माँगते हैं, तो यही तेजसिंह सारी रकम अकेला दे सकता था, परंतु वह पंथ की खातिर आर्थिक कुर्बानी देने से कतरा जाता हैं।

इसप्रकार हम समझ सकते है कि धार्मिक पाखंड के मूल में व्यक्ति का आर्थिक स्वार्थ ही होता है।

(3) अनुपयोगी परम्पराएँ और अंधश्रध्दाएँ :-

अनुपयोगी परम्पराएँ और अंधश्रध्दाओं का चित्रण भीष्म साहनी जी ने अपने उपन्यासों में किया है। 'झरोखे' उपन्यास में जब घर में लड़की पैदा होती हैं तो उसकी जीभ पर शहद से 'ओम' लिखा जाता है क्योंकि कहीं वह मर न जाए। बच्ची का जन्म होनेपर पिताजी कहते हैं, "बच्ची की जीभ पर 'ओम्' लिखों। शहद से 'ओम्' लिखो।" "जाओं बलदेव, माँ से कहो, बच्ची की जीभ पर 'ओम्' लिखो।"[31] पिताजी की इस बात का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है, यह केवल अंधश्रध्दा ही है। हिन्दू समाज में परंपरा से चले आए यज्ञोपवित संस्कार, मुंडन, मंत्र-जाप, हवन, संध्या के सामाजिक दुष्परिणाम दिखाकर भीष्मजी ने इन परंपराओं को सिर्फ एक ढकोसला माना है।

माँ के पास से जब चाभियाँ गुम होती है तो मौसी "प्रिश्न" लगाकर देखती है। लेकिन "प्रिश्न" लगाकर भी चाभियाँ नहीं मिलती।

'तमस' उपन्यास में मुस्लिमों का विश्वास है कि मस्जिद में मरा हुआ सुअर फेंकना मस्जिद को नापाक बनाता है इस्लाम धर्म का अपमान होता है। हिन्दु समाज में गाय को मारना और मंदिर फेंकना मंदिर को और हिन्दु धर्म को अपवित्र बनाना है। इसके परिणामस्वरूप ही शहर में साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठते हैं।

इसप्रकार इन सभी बातों का कोई ठोस वैज्ञानिक आधार नहीं है, यह सभी तो केवल अनुपयोगी परम्पराएँ और अंधश्रध्दाएँ ही हैं।

(4) हृदयहीन और भ्रष्ट अफसरशाही :-

भारतीय नौकरतंत्र में भीष्म साहनी की दृष्टि में अफसर लोगों का चरित्र हृदयहीन और भ्रष्ट रहा हैं। इसी भ्रष्ट और हृदयहीन अफसरशाही का चित्रण भीष्मजी ने अपने

उपन्यासों में सजीवता के साथ किया है। 'तमस' उपन्यास में अंग्रेज अफसर रिचर्ड भी निर्दय, अमानवीय है। कुएँ में औरतों और बच्चों का डूब मरना रिचर्ड के लिए सिर्फ एक नया कौतूहल का विषय मात्र बनता हैं। उसके लिए दुर्घटनाग्रस्त इलाका एक पिकनिक स्पॉट का रुप लेता है। वह अपनी पत्नी लीजा को वहाँ सैर करने के लिए ले जाना चाहता हैं। लीजा उसे पूछती है कि अगर 103 गाँव जल जाये तो भी क्या वह भावुक नहीं होगा? इसपर रिचर्ड कहता है, "यह मेरा देश नहीं है। न ही ये मेरे देश के लोग हैं।"[32] यहाँ पर रिचर्ड की हृदयहीनता का परिचय मिलता है। रिचर्ड सारे निर्णय अंग्रेज हुकूमत के हित में ही लेता है। रिचर्ड अपनी पत्नी लीजा पर भी विश्वास नहीं रखता। दंगा–फसाद में बरबाद हुए लोगों के प्रति उसे कोई वास्ता नहीं है, उसे तो सिर्फ आँकडे चाहिए। वह केवल अपना काम करना जानता है।

यही हृदयहीनता और भ्रष्ट अफसरशाही हिन्दु–मुस्लिमों में साम्प्रदायिक तनाव, दंगा–फसाद निर्माण करती है। अपने लक्ष्यपूर्ती के लिए वह धार्मिक मामले में दखल नहीं देता। यही अफसरशाही साम्प्रदायिक दंगों का बीज बो देती है। किसी सालोत्तरी साहब के कहनेपर ही मुरादअली मस्जिद में मरा हुआ सुअर फेंककर दंगों का बीज बोता है। साम्प्रदायिक दंगे होने के पश्चात रिचर्ड अमन के व्यवस्थापक के रुप में साम्प्रदायिकता की आग बुझाने के लिए अवतरित होता है। आकाश में चक्कर काँटनेवाले सत्ता के हवाई जहाज देखकर ही साम्प्रदायिक दंगे रुक जाते हैं, जो इस बात का संकेत है कि साम्प्रदायिक दंगे अंग्रेज सत्ताधिशों के इशारे पर अंग्रेजी नीति के तहत किए गये थे।

(5) <u>व्यापारी तथा पूँजीपतियों की आर्थिक शोषण की नीति</u> :–

व्यापारी तथा पूँजीपति लोग जब व्यापार करते हैं, तो उनका एक ही उद्‌देश्य होता है – सामान्य जनता को शोषण करके अपने लिए अधिक से अधिक मुनाफा कमाना। व्यापार में उनकी कोई जाति, देश, धर्म नहीं होता। अपने फायदे के लिए ये लोग विभिन्न पध्दतियों का उपयोग कर सामान्य जनता का शोषण करते हैं। 'झरोखे' उपन्यास में भीष्म साहनी के पिताजी मध्यमवर्गीय आर्यसमाजी होने के साथ साथ एक व्यापारी भी हैं।

भीष्मजी के पिताजी छाबडीवाले को खीरे ठीक तरह से तौलकर नहीं देते, इसीकारण एक छाबडीवाला उनकी उँगली मरोडता है।

'तमस' में दंगों के पश्चात अनेक लोग बेघर होते हैं, लेकिन व्यापारियों को इस बात का कोई मतलब नहीं है, उन्हें तो अपने व्यापार से मतलब है। ठिगने मुंशीराम और नूरइलाही में दोनों फिरकों के व्यापारियों की सारी कट्टरपंथी जहनियत के बावजूद संपत्ति की खरीद-फरोख्त आदि के लिए दोनों को बेताब देखा जा सकता है। उनका ध्यान इस बात पर है कि अमन कायम होनेपर कीमतें चढेगी या कम होगी? व्यापारियों को मालूम था कि दंगों के बाद हिन्दु के मुहल्ले में न मुंसलमान रहेगा और न मुसलमान मुहल्ले में कोई हिन्दु रहेगा। इसी बात को ध्यान में रखकर व्यापारी लोग हिन्दु-मुसलमानों के हजारो रुपयों के मकान कौडियों के दाम में खरीद लेते है। इन व्यापारी लोगों को जनता के सुख-दु:ख के बारे में कोई चिंता नहीं है, उनका एक ही उद्देश्य है किसी भी हालत में सामान्य जनता से अधिक से अधिक मुनाफा कमाना।

(6) <u>धर्म और व्यापारी पूँजीपतियों का गठबंधन</u> :-

धर्म और व्यापारी लोगों के गठबंधन की अनेक गुत्थियों को भीष्म साहनीजी ने अपने उपन्यासों में सुलझाया है। यहाँ पर धर्म का विकृत स्वरुप अधिक प्रधान रहा है। एक ओर सामान्य मुसलमानों के प्रति घृणा, तिरस्कार है तो दूसरी ओर व्यापारी मुसलमानों के प्रति आदर और स्नेह भाव है। 'झरोखे' उपन्यास में अपने पिताजी का व्यापारी मुसलमानों के साथ वार्तालाप देखकर भीष्मजी लिखते हैं, "'बपारी' मुसलमान और मुहल्ले के मुसलमान में बड़ा फर्क है। 'बपारी' मुसलमानों के साथ पिताजी हँस-हँसकर बातें करते हैं, उनकी ठुड्डी को हाथ लगाते हैं, उन्हें चाय पिलाते हैं, खाना खिलाते हैं। मुहल्ले के मुसलमान म्लेच्छ हैं, वे बकरे की सिरी भूनते हैं, वे हिंदुओं के खोमचे लूट होते हैं और इनके बच्चे इश्किया गीत गाते हैं। और गंदी गालियाँ देते हैं, इसलिए पिताजी उनके साथ हमें खेलने नहीं दते।"[33]

'तमस' में लाला लक्ष्मीनारायण और शेख नूरइलाही दोनों व्यापारी है। हिंदु-मुसलमानों में दंगे हो रहे थे। परंतु ये दोनों एक दूसरे के जान माल की रक्षा करते हैं, क्योंकि दोनों व्यवहारकुशल व्यापारी थे और एक दूसरे की जरुरतों को समझते थे। इसी लक्ष्मीनारायण का बेटा रणवीर हिन्दुओं की और से मारकाट में सहभागी होकर एक गरीब मुसलमान फेरीवाले की हत्या करता है। शाहनवाज की हिन्दूविरोधी घृणा रघुनाथपर न बरसकर उसके नौकर मिल्खी पर ही बरसती है। रघुनाथ जैसे सम्पन्न हिंदु को भी अपने परिवार और जेवरों की चिंता रहती है लेकिन उस वफादार नौकर मिल्खी की नहीं जो उनके घर की रखवाली कर रहा है। जब शाहनवाज मिल्खी को रघुनाथ के घर लाना चाहता है तो रघुनाथ सोचता है कि उनसे एक मरीज की देखभाल कैसे हो पाएगी। शाहनवाज मिल्खी का इन्तजाम करने की बात करता है, तो रघुनाथ की पत्नी को शाहनवाज पुण्यात्मा लगता है।

प्रधानजी भी एक व्यापारी है, जो लाठियाँ खरीदने के लिए रकम देने को तैयार है। इसीकारण व्यापारियों का धर्म को साम्प्रदायिक बनाने में बड़ा हाथ रहा हैं। धार्मिक उन्माद और जुनून पैदा करने में पूँजीवादियों का हाथ रहा है। 'तमस' में पूँजीवाद के माध्यम से भीष्मजी ने उस धर्म का पर्दा फाश किया है, जो साम्प्रदायिकता को बढ़ाता है।

"भीष्म साहनी ने अपने कथासाहित्य में यह स्पष्ट कर दिया है कि धर्म और पूँजीवादी आधुनिकता-बोध से जीवन में विसंगतियों का जाल बुनता है, वह अमूर्त हो जाता है। इन्हीं दोनों के कारण इतिहास में अतिरिक्त मूल्योंवाली मुनाफाखोर संस्कृति का विकास हुआ है। ये पूँजीपोषक अतिरिक्त मूल्य ही निरपेक्ष दर्शन और निरपेक्ष भावबोध में सदैव रुपान्तरित होतें रहे है और निरपेक्षता ही शाश्वत और चिरन्तन की शब्दछाया में पलती रही हैं।"[34]

(7) <u>मध्यवर्गीय जीवन का असंगत चरित्र</u> :-

महानगर के मध्यवर्गीय जीवन के उच्च-मध्यवर्गीय और निम्न-मध्यवर्गीय दोनों स्तरों को भीष्म साहनीजी ने अपने कथा परिवेश का अंग बनाया है। अपने पूराने धार्मिक, नैतिक आदर्शोंका पालन और वैज्ञानिक आधुनिकता का पालन, इसीकारण मध्यवर्ग के

जीवन में विसंगतियों का जाल बुनता है। मध्यवर्गीय जीवन का भरपूर विश्लेषण भीष्मजी ने अपने उपन्यास साहित्य में किया हैं।

भीष्म साहनी के 'झरोखे' उपन्यास में हिन्दू मध्यमवर्गीय परिवार आसपास के मुस्लिमों को म्लेच्छ समझकर अपने बच्चों को उनसे अलग रखते है। मुस्लिम बच्चों के साथ खेलने नहीं देते। हिन्दू परिवार में लड़कों को अपने गुरू तथा माता–पिता द्वारा ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी जाती है। स्त्रियों के प्रति गैरमनोवैज्ञानिक दृष्टि दी जाती है। स्त्री की ओर आँखे उठाकर देखना भी पाप समझा जाता हैं। तेजी से बदलते हुए सामाजिक सम्बन्धों से बच्चों को पृथक रखा जाता है। इन सब बातों का परिणाम यह होता है कि बच्चों में ग्लानि और हीनता की भावना पैदा हो जाती है। बच्चे दिशाहीन होकर भटक जाते हैं।

मध्यमवर्गीय घरों में नौकरों के प्रति भी हीनता भरी दृष्टि से देखा जाता है। तुलसी घर का नौकर है परंतु उसे घर के पाखाने में बैठने नहीं दिया जाता।

इसाप्रकार भीष्मजी ने मध्यमवर्गीय जीवन का विश्लेषण अपने उपन्यासों में किया है।

(8) <u>सनातन वृत्ति</u> :–

'झरोखे' उपन्यास में भीष्मजी की माँ ने घर आने वाले मुस्लिम व्यापारियों के लिए घर के एक कोने मे खान–पान के लिए अलग बर्तन रखे है। मुस्लिम व्यापारियों के चले जाने के बाद इन बर्तनों को राख से स्वच्छ करके अलग स्थान पर रखा जाता है। इन बर्तनों में घर का कोई सदस्य खाना नहीं खता।

'तमस' उपन्यास में भी हरनामसिंह और बन्तों को एहसान अली की पत्नी राजो खतरा उठाकर अपने घर में शरण देती है। परंतु हरनामसिंह और बन्तो को मुस्लिम का छुआ हुआ खाना पसन्द नहीं आता। दूसरे दृश्य में किसी पंडित की लडकी प्रकाशो को मुसलमान उठाकर ले जाते है। जब साम्प्रदायिक दंगे खत्म हो जाते है और लोग पंडित से लडकी को घर लाने की बात करते है। परंतु पंडित और उसकी पत्नी दोनों कहते है कि, "अब हमारे पास

आकर क्या करेगी जी? बुरी वस्तु तो उसके मुँह मे उन्होंने पहले ही डाल दी होगी।" यहाँ पर "सनातनी वृत्ति ने वात्सल्य का गला घोंट दिया है। धार्मिक कट्टरता के नामपर हिन्दुओं ने अपने वात्सल्य को नकारा है।"[35]

(9) सर्वहारा वर्ग का संघर्ष :-

मार्क्सवादी दृष्टि रखनेवाले और मध्यवर्ग के कथाकार भीष्म साहनी ने निम्न वर्ग – सर्वहारा वर्ग का चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। निम्न वर्ग – सर्वहारा वर्ग का चित्रण अपने उपन्यासें मे किया हैं। निम्न वर्ग का उपयोग जोड़-तोड़ और इस्तेमाल की राजनीति में किया जाता है। 'तमस' उपन्यास का मुरादअली और नत्थु इस निम्न वर्ग के पात्र है। ये पात्र वास्तविकता खोजने में असमर्थ हैं। नत्थु यह नहीं जानता कि उसे सूअर क्यों मारने के लिए कहा गया है? शहर में जब साम्प्रदायिक दंगे होते है तब नत्थु का मानसिक द्वंद्व स्पष्ट होता है। नत्थु साम्प्रदायिक आग का निमित्त होता है। साम्प्रदायिक आग का शिकार और साम्प्रदायिक घृणा का शिकार भी यह मध्यवर्ग ही होता है। इत्र बेचनेवाला गरीब मुसलमान, हरनामसिंह, इकबालसिंह, नौकर मिल्खी और मानसिक रुप से नत्थु इस साम्प्रदायिक आग का शिकार बनते हैं।

'झरोखे'उपन्यास में भी तुलसी को वेद-मंत्र इसलिए पढाया जाता है कि वह इन्सान बनकर धर्मग्रंथ का अध्ययन करे, परंतु जीवन में आर्थिक निर्भरता लानेवाली शिक्षा से उसे दूर रखा जाता है। उसे अंग्रजी या उर्दू सिखायी नहीं जाती इसलिए उसे लगता है कि क्या वह जन्मभर नौकर के रुप में बर्तन ही माँझता रहेगा? आर्यसमाज के औषधालय में तुलसी जब वैद्यगिरी सीखने जाता है, तो वहाँपर उसे सारा समय सीढियाँ धोने तथा वैद्यजी के घर का काम करने को कहा जाता है। उपन्यास के अन्त में वह पुनः भीष्मजी के घर में नौकर के रुप में शामिल होकर अपने बेटे को भी वहीं काम पर लगाता है। इसप्रकार यह निम्न वर्ग सिर्फ श्रम करने के लिए ही मजबूर है।

(10) वर्गसंघर्ष का स्वरुप :-

भीष्म साहनी के उपन्यास साहित्य पर मार्क्सवाद का गहरा प्रभाव पड़ा है। भीष्मजी मार्क्सवादी दृष्टि से जीवन को देखते हैं और अपने साहित्य में लाते हैं। आम मनुष्य के सारे जीवन संघर्ष का मूल कारण अर्थ ही मानते है। 'तमस' का नत्थु पाँच रुपये के लिए सुअर मारने को तैयार हो जाता है।

'झरोखे' उपन्यास में तुलसी का सभी जगह पर शोषण होता है। उसे घर के पाखाने में बैठने नहीं दिया जाता। उसका सारा समय बर्तन माँजने तथा रसोई बनाने में व्यतीत होता है। उसे कामकाजी अंग्रेजी, उर्दू भाषा के अलावा धर्मग्रंथ की भाषा पढ़ाई जाती है। औषधालय में यह वैद्यगिरी सीखने जाता है, लेकिन वहाँ पर भी उसका सारा समय सीढियाँ धोने तथा वैद्यजी का काम करने में जाता है। उसे कहीं भी उसके काम का उचित मुआवजा नहीं मिलता। उपन्यास के अन्त में वह फिर से भीष्मजी के घर में घरेलू काम में जुट जाता है और अपने लड़के को भी वहीं कामपर रखता है। उपन्यास में भीष्मजी इस तथ्य की ओर संकेत देते हैं कि आज की निर्मम अवस्था में नौकरों का आर्थिक, सामाजिक रुप से संघर्ष हो रहा है।

'तमस' उपन्यास में साम्प्रदायिकता अधिक है। इस साम्प्रदायिकता की आग में भी सामान्य जनता ही शिकार होती हैं। शाहनवाज, रघुनाथ, सोहनी, शेख नूर इलाही, लाला लक्ष्मीनारायण आदि व्यापारी पूँजीवादी पात्र अपने व्यापारी संबंधों की रक्षा के लिए एक है। शाहनवाज अपनी व्यापारी दोस्ती की खातिर रघुनाथ के गोदामों की रक्षा करता है। रघुनाथ को अपने घर में सहारा देता है। परंतु शाहनवाज की साम्प्रदायिकता का शिकार होता है, रघुनाथ का नौकरी 'मिल्खी'। इसीप्रकार हिन्दू-मुस्लिमों की साम्प्रदायिकता का शिकार सामान्य हिन्दू तथा मुसलमान ही होता हैं। इस साम्प्रदायिकता की घृणा का शिकार भी सामान्य लोग ही होते हैं। इत्र बेचनेवाला गरीब मुसलमान, हरनामसिंह, इकबालसिंह, कांग्रेसी जरनैल,

मिल्खी, नत्थु आदि सामान्य लोग इस साम्प्रदायिकता के शिकार होते हैं। दूसरी ओर शाहनवाज, रघुनाथ, तेजसिंह आदि खाते-पिते रईस लोग इन सारे दंगों में साफ और बेदाग होकर बचते हैं। वस्तुतः वे बेदाग नहीं हैं।

इसप्रकार भीष्म साहनी के उपन्यासें में अंग्रेजी साम्यवाद, भारतीय सामन्तवाद और आयातीत पूँजीवाद के विरुध्द सामान्य जनता संघर्ष करती हुई नजर आती है। यहाँ सामान्य जनता परम्पराओं का बोझ उठा रही है। निष्कर्षतः यह कहा जाता है कि धर्म मनुष्य को आत्महीन बनाता है और गलत रुढ़ि/ परंपराएँ समाज को नुकसान देह होती है। भीष्मजी मार्क्सवादी दृष्टि से मनुष्य और समाज का चित्रण करते हैं। इस प्रकार भीष्मजी का सामाजिक यथार्थवाद प्रेमचंद की परम्परा का होते हुए भी उनसे बहुत आगे हैं। यहीं भीष्मजी के सामाजिक यथार्थता का रुप-गुण और चरित्र हैं।

<u>'झरोखे' और 'तमस' में राजनीतिक यथार्थवाद</u> :-

भीष्म साहनी द्वारा लिखित प्रत्येक उपन्यास में राजनीतिक स्थिति कायम है। 'तमस' और 'मय्यादास की माडी' उपन्यास में प्रत्यक्ष रुप से तथा अन्य उपन्यासों में अप्रत्यक्ष रुप से राजनीतिक स्थिति कायम है। आपने समसामायिक राजनीति का विविध प्रसंगों में यथार्थ चित्रग अपने उपन्यासों में किया है। आपके राजनीतिक यथार्थवाद के चित्रण के रुप में 'तमस' एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। अतः राजनीतिक यथार्थवाद के निम्नलिखित पहलू महत्वपूर्ण है –

(1) <u>राजनीतिज्ञ और पूँजीपतियों का गठबन्धन</u> :-

राजनीतिक यथार्थवाद भीष्म साहनी के उपन्यासों का महत्वपूर्ण अंग रहा है। इसमें पूँजीपति वर्ग और राजनेताओं की साँठ-गाँठ है और ये दोनों मिलकर सार्वजनिक दान को लूटते है। अंग्रेजों की सत्ता समाप्त होते देख पूँजीपति वर्ग ने राजनीति और आर्थिक तंत्र में अपना स्थान पक्का किया है। 'तमस' उपन्यास में "मेहताजी छोटी हस्ती नहीं थे। कुल मिलाकर सोलह बरस जेलों में काटकर आये थे और जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान थे, और सबसे उजली खादी पहनते थे। उन पर यह आरोप लगाना बड़ी हिमाकत थी, पर अर्से से

अफवाह चली आ रही थी कि सेठी ठेकेवाले का पचास हजार का बीमा उन्हें मिलनेवाला है, और इसके एवज मेहताजी सेठी को चुनावों में कांग्रेस का टिकट दिलवानेवाले हैं।"[36] मेहताजी कांग्रेस कमेटी के मुखिया होने पर भी पैसे के लालच में आकर मेहताजी ठेकेदार सेठी को चुनाव टिकट देने का वादा करते है। इसप्रकार स्वातंत्र्योत्तर काल में राजनेता और पूँजीपतियों का गठबन्धन रहा है। इस गठबन्धन को भीष्मजी ने अनेक प्रसंगों द्वारा अपने उपन्यासों में चित्रित किया हैं। लाला लक्ष्मीनारायण शस्त्र खरीदने के लिए धन जमा करते हैं, स्वयं भी कुछ धन आर्यसमाज के युवकों को लाठियाँ खरीदने के लिए देते है। लक्ष्मीनारायण का बेटा रणवीर हिन्दू सभा से संस्कारित होकर गरीब इत्रफरोश मुसलमान की हत्या करता हैं। इसप्रकार राजनेता और पूँजीपति दोनों मिलकर देश की शांति में बाधा पैदा करते हैं।

(2) राजनीति पर भ्रष्ट और अनैतिक तत्वों का पर्दाफाश :-

भारतीय स्वातंत्र्य आंदोलन तथा स्वातंत्र्योत्तर राजनीति में कुछ अनैतिक तथा सिध्दांतविहीन लोगों ने मिलकर राजनीति को एक गन्दगी बनाकर रखा है। 'तमस' उपन्यास में लाला श्यामलाल कांग्रेस कमेटी के सदस्य आँकडा बाबू को बताता है, कि कांग्रेस मंगलसेन को टिकट दे रही है। मंगलसेन के बारे में वे आगे बताते हैं कि, "कांग्रेस ऐसे लोगों को टिकट देगी तो बदनाम नहीं होगी?" फिर बाबू के कान के पास मुँह ले जाकर बोला ,"जुएँ के अड्डे चलाता है । दो अड्डे हैं उसके। पुलिसवालों के साथ मिलकर अड्डे चलाता है। अब शहर में गांधीजी आयें, नेहरुजी आयें और उनके आगे-पीछे नाचता फिरे, तो इससे वह कांग्रेसी हो जाता है? खादी वह नहीं पहनता।"[37] लालाजी बोले जा रहे थे, "बीयर पीता है। अगर एतबार न हो तो कम्पनी बाग के क्लब में जाकर देख लो, इसका बाप भी ऐबी था, यह भी ऐबी है ... उसे भगन्दर हो गया था। भगन्दर से मरा था। यह भी भगन्दर से ही मरेगा।"[38] यह मंगलसेन जिला कांग्रेस कमेटी का सदस्य है और उसे ही कांग्रेस टिकट देनेवाली है। इस मंगलसेन के माध्यम भीष्मजी ने स्पष्ट किया है कि - राजनीति पर शोषक, व्यापारी, बेईमान लोगों का ही वर्चस्व रहा है।

(3) <u>राजनीति से उत्पन्न साम्प्रदायिकता</u> :-

प्रारम्भ से ही कांग्रेस राष्ट्रीय एवं असाम्प्रदायिक संस्था के रुप में विकसित हो रही थी। कांग्रेस की लोकप्रियता तथा हिन्दू पुनरुत्थानवादी प्रवृत्तियों के कारण मुस्लिम और अंग्रेज भी संगठन आवश्यक महसूस करने लगे। मुस्लिमों की आकांक्षा एवं अधिकारों की रक्षा के लिए 1906 में अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की स्थापना की गई। "इसप्रकार के संगठन के कारण मुस्लिम नवयुवक कांग्रेस मे प्रवेश नहीं करेंगे – यह भी इस परिषद का उद्देश्य था।"[39] और इसी उद्देश्य को भीष्मजी ने 'तमस' उपन्यास में व्यक्त किया है। मुस्लिम लीग का कार्यकर्ता महमूद साहिब कहता है कि, "यह सब हिन्दुओं की चालाकी है, बख्शीजी, हम सब जानते हैं। आप चाहें जो कहें, कांग्रेस हिन्दुओं की जमात है और मुस्लिम लीग मुसलमानों की। कांग्रेस मुसलमानों की रहनुमाई नहीं कर सकती।" आगे वह कहता है कि, "अजीत और हकीम हिन्दुओं के कुत्ते हैं। हमें हिन्दुओं से नफरत नहीं, इनके कुत्तों से नफरत है।" मुस्लिम लोगों की नजर में कांग्रेसी मुसलमान हिन्दुओं के कुत्ते थे। "मौलाना आजाद हिन्दुओं का सबसे बडा कुत्ता है। गांधी के पीछे दूम हिलाता फिरता है, जैसे ये कुत्ते आपके पिछे दुम हिलाते फिरते हैं।"[40] वह कहता ही जा रहा था, "हिन्दुस्तान की आजादी हिन्दुओं के लिए होगी, आजाद पाकिस्तान में ही मुसलमान आजाद होंगे।"[41] इसप्रकार मुस्लिम लोग कांग्रेस को हिन्दुओं की जमात सिध्द कर रही थी। पाकिस्तान की स्थापना के लिए मुस्लिम लोग द्विराष्ट्रवाद सिध्दांत का साम्प्रदायिकता के आधार पर प्रचार कर रहे थे और इसीकारण भारत-पाकिस्तान में ये दोनों राष्ट्र निर्माण हो गए।

(4) <u>युवाशक्ति का धर्म और राजनीति में दुरूपयोग</u> :-

भारतीय युवाशक्ति में हिन्दुत्ववाद अथवा मुसलमानों के प्रति विरोधी संस्कार के बीज बोकर कुछ स्वार्थी, धार्मिक, राजनीतिक तत्व युवाशक्ति का दुरुपयोग कर रहे है। 'तमस' में भी रणवीर, धर्मदेव, इंद्र, शंभु ऐसे ही कुछ युवक है जिन्हें हिन्दु महासभा में मुस्लिमों के प्रति घृणास्पद बातें बतायी जाती है। मास्टरजी उन्हें सुनाते हैं कि, "म्लेच्छ तो गन्दे लोग होते है, म्लेच्छ नहाते नहीं, पाखाना करते हाथ नहीं धोते, एक-दूसरे का जूठा खा लेते

हैं, समय पर शौंच नहीं जाते।"[42] "रणवीर की आँखों के सामने बार–बार म्लेच्छ घूम जाते थे। पड़ोस में सडक के किनारे बैठा मोची म्लेच्छ है, घर के सामने टाँगा हाँकनेवाला गाडीवाला म्लेच्छ है मेरी कक्षा में पढनेवाला हमीद म्लेच्छ है, गली में मंजीफा माँगनेवाला फकीर म्लेच्छ है। पडोस में रहनेवाला परिवार म्लेच्छों का है।"[43] इसप्रकार युवाशक्ति के मन में किसी धर्म अथवा जाति के प्रति घृणा और नफरत के बीज बोये जाते हैं। हिंसा करने के लिए इन युवकों को प्रथम प्रशिक्षण दिया जाता है, मुर्गी काटने के लिए कहा जाता है। यही रणवीर साम्प्रदायिक दंगों में हिन्दुओं की ओर से हिस्सा लेता है और गरीब मुसलमान इत्रफरोश की हत्या करता है। वह हलवाई को भी जख्मी करता है। इससे स्पष्ट होता है कि युवाशक्ति का दुरुपयोग कुछ धार्मिक, स्वार्थी राजनीतिक तत्व कर रहे हैं।

(5) <u>सत्तापक्ष का चरित्र</u> :–

प्रजा की असमानता का सहारा लेकर, प्रजा को आपस में लड़ाकर सत्ता पक्ष सत्ता बनाए रखने का प्रयास किया जाता है। अंग्रेजों की "फूट डालो और राज्य करो" नीति का भीष्मजी ने अपने उपन्यास 'तमस' में पर्दाफाश किया हैं। उपन्यास में अंग्रेजी कमिश्नर रिचर्ड के पात्र द्वारा सत्तापक्ष का चित्रण किया गया है। रिचर्ड का चरित्र स्पष्ट करते हुए अपनी पत्नी से कहता है, "डार्लिंग, हुकूमत करनेवाले यह नहीं देखते कि प्रजा में कौनसी समानता पायी जाती है, उसकी दिलचस्पी तो यह देखने में होती है कि वे किन–किन बातों में एक–दूसरे से अलग है।" रिचर्ड जानता था कि हिन्दु, मुसलमान, सिक्ख लोगों की धार्मिक मान्यताएँ, खानपान, रहनसहन अलग-अलग है। इन्हीं मान्यताओं का उपयोग कर वह जनता को आपस में लडाता है। रिचर्ड दंगों को टाल सकता था, लेकिन वह उसे हिंदू–मुसलमानों का आपसी मामला बताकर टाल देता है। अंत में अंग्रेजों का हवाई जहाज जब हवा में चक्कर काटता है तो दंगे रुक जाते हैं। यहाँ पर भीष्मजी ने इस बात की ओर संकेत किया है कि अगर सत्तापक्ष चाहते तो दंगे रोक सकते थे लेकिन सत्तापक्ष और प्रशासन को जनता के सुख, दुःखों से कोई वास्ता नहीं है।

इसप्रकार सत्तापक्ष का रिचर्ड का चरित्र एक ऐसे सत्तापक्ष का चरित्र है जो किसी भी हालत में सत्ता बनाए रखना चाहता है, देश विभाजन करके भी। बख्शीजी के मन में सत्तापक्ष का चरित्र इसप्रकार है – "फिसाद करनेवाला भी अंग्रेज, फिसाद रोकनेवाला भी अंग्रेज, भूखों मारनेवाला भी अंग्रेज, रोटी देनेवाला भी अंग्रेज, घर से बेघर करनेवाला भी अंग्रेज, घरों में बसानेवाला भी अंग्रेज .... अंग्रेज फिर बाजी ले गया।"[44]

(6)दलबन्दी :–

देश का विभाजन होने से पहले भारत की राजनीति में कांग्रेस, मुस्लिम लीग और कम्युनिस्ट पार्टी प्रमुख रुप में सक्रीय थी। इन तीनों पार्टियोने भारत अंग्रेजों से स्वतंत्र करने का तथा भारत पाकिस्तान बनाने का या एक ही रखने को अपनी ओर से यथासंभव प्रयत्न किया। कंाग्रेस ने तो पाकिस्तान न बने इसके लिए अनेक प्रयत्न किये परंतु खूनी साम्प्रदायिक दंगे देखकर अन्ततः पाकिस्तान बनाने को कंाग्रेस ने मान्यता दी। कम्युनिस्टों ने साम्प्रदायिकता को भडकाने की कोशिश कहीं पर भी नहीं की। "जब तक इतिहास में प्रमाण उपलब्ध नहीं होते कि कम्युनिस्ट उन दिनों साम्प्रदायिकता को भडकाने का कार्य कर रहे थे तब तक तो हमें उनके इस विधायक कार्य को स्वीकार करना ही होगा।"[45] 'तमस' उपन्यास में कंाग्रेसने जब प्रभातफेरी निकाली है तो वह "वन्दे मातरम्", "भारत माता की जय", "महात्मा गांधी की जय" आदि नारे लगा रहे थे। मुस्लिम लीग इन नारों का विरोध कर "पाकिस्तान जिंदाबाद" के नारे लगा रहे थे। एक कांग्रेसी कहता है कि, "आजादी सबके लिए है। सारे हिन्दुस्थान की आजादी के लिए है।" तब मुस्लिम लीग के महमद साहब कहते है, "हिन्दुस्थान की आजादी हिन्दुओं के लिए होगी, आजाद पाकिस्तान में ही मुसलमान आजाद होंगे।" कंाग्रेस हिन्दुओं की और लीग मुस्लिमों की जमात है। इसप्रकार कंाग्रेस और मुस्लिम लीग अपने–अपने उद्देश्यों के लिए साम्प्रदायिकता के आधारपर दलबन्द हो गयी थी। कंाग्रेस और मुस्लिम लीग अपने दल से ऊपर उठकर देश का हित सोचने के लिए तैयार नहीं थे वहींपर कम्युनिस्ट पार्टी का देवदत्त हर हालत में देश में (शहर में) शांति कायम करना चाहता है, लेकिन लोग उसे ही गद्दार मानते

हैं। इसप्रकार कांग्रेस के आंतरिक संघर्ष, कंाग्रेस और मुस्लिम लीग का संघर्ष, . कंाग्रेस के लोगों का कम्युनिस्टों को गद्दार मानना भारतीय राजनीति में दलबन्दी को सही रुप में हमारे सामने प्रकट करता है।

(7) राजनीति में अवसरवाद और पैसे का बोलबाला :-

भीष्म साहनीजी ने 'तमस' में भारतीय राजनीति में पैसेवालों का बोलबाला और अवसरवाद को चित्रित किया है। कंाग्रेस के मेहताजी लाहोर कंाग्रेस में शंकर के बजाय कोहली को भेजने की योजना बनाते हैं। मेहताजी बीमा कंपनी के एजंट भी है। अनेक दिनों से यह अफवाह उठी थी कि उन्हें सेठी ठेकेवाले का पचास हजार का बीमा मिलनेवाला है। उसके बदले वे सेठी को चुनाव में कंाग्रेस का टिकट दिलानेवाले है। इसप्रकार पार्टी चुनाव में अनेक गैर तरीके अपनाये जाते हैं और वरीष्ठ नेता भी इन बातों की ओर ध्यान नहीं देते। चुनाव में अधिक पैसेवालों का बोलबाला भी होता है। 'तमस' में कांग्रेस मंगलसेन को टिकट दे रही है जो जुए के दो दो अड्डे चलाता है, बियर पीता है, पैसे की उसे कोई कमीं नहीं है। यहीं मंगलसेन अमन कमेटी की बस में बैठकर लोगों को अमन बनाए रखने का संदेश देता है। इसप्रकार राजनीतिक पार्टियों में पैसेवाले, अवसरवादी, सुविधाजीवी तत्व आसानी से घूस जाते हैं।

(8) राजनेताओं की सिध्दांत-हीनता :-.

'तमस' में भीष्मजी ने जीन कंाग्रेस कार्यकर्ताओं का चित्रण किया है उनकी कथनी और करनी में बडा अंतर है। कंाग्रेस कमेटी के अध्यक्ष बख्शीजी सिगरेट पीते हैं, कोहली जैसे कांग्रेस कार्यकर्ता ऊपर से खादी पहनते और अन्दर से रेशम पहनते है। प्रभात फेरी में भाग लेकर काम करना उन्हें बकवास लगता है। लोग इन्हें देशभक्त कहे इसलिए वे ऐसे सारे काम करते हैं। कांग्रेस कार्यकर्ता शंकर तो समझता है कि नालिया साफ करने से आजादी नहीं मिलेगी। शहर और गाँवों में जब खुनी साम्प्रदायिक दंगे हो रहे थे उस वक्त कंाग्रेस, दफ्तर पर ताला लगाया जाता है। शांति स्थापित करने के लिए जब मिटींग बुलाई जाती है तो मिटींग में ये लोग मकान खरीदने बेचने तथा टिकट प्राप्त करने की बाते करते हैं।

इसप्रकार कांग्रेस कार्यकर्ताओं के कहने में और कृति करने में बड़ा अन्तर है, जिसे 'तमस' में चित्रित किया गया है। यहाँ राजनीति सिध्दांत–हीनता से गुजरती मिलती है।

(9) राजनीति और राजनेताओं का अन्तर्विरोध और दुहरापन :–

हिन्दुस्थान को आजादी मिलने से पहले कांग्रेस, मुस्लिम लीग, कम्युनिस्ट पार्टी आदि अनेक राजकिय पक्ष स्वतंत्रता के लिए कार्यरत थे। "यूँ तो सब राजनीतिक दल उन दिनों स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए ही कार्यरत होने के दावे कर रहे थे, किन्तु वास्तविकता यह थी कि एक ही लक्ष्य की प्राप्ति में संलग्न इन दलों में पारस्परिक समझ, सौहार्द और ईमानदारी की बेहद कमी थी। इन दलों के अन्दर की स्वार्थ लिप्सा स्वतंत्रता प्राप्ति के मार्ग में जबरदस्त बाधा बन रही थी।"[46] कांग्रेसी समझते थे कि मुस्लिम लीग मुसलमानों को भड़काकार स्वतंत्र पाकिस्तान बनाना चाहती हैं और मुस्लिम कांग्रेस को हिन्दुओं की जमात समझते थे। 'तमस' में लक्ष्मीनारायण जैसे देशभक्त का विश्वास है कि मुसलमानों का दिमाग कांग्रेस कार्यकर्ताओं ने खराब किया है। मुस्लिमों को भी हिन्दुओं से नफरत नहीं बल्कि हिन्दुओं के कुत्तों से नफरत हैं। कुत्तों का मतलब वे सब मुसलमान है, जो हिन्दुओं के पिछे दुम हिलाते घूमते रहते हैं। गांधीजी के साथ रहनेवाले मोलाना आजाद को भी हिन्दुओं का कुत्ता समझा जाता है। कम्युनिस्ट पार्टी के बारे में तो कांग्रेस और मुस्लिम लीग की राय द्वेषपूर्ण ही थी। इसलिए कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं को ही गद्दार माना जाता है। कम्युनिस्ट पार्टी का देवदत्त शहर में जल्द ही शांति स्थापित करना चाहता था, लेकिन उसे ही गद्दार समझा जाता है। कांग्रेस का मनोहरलाल भी कहता है कि, "इस बस में मैं बैठुंगा या कम्युनिस्ट बैठेगा। मै मुल्क के गद्दार के साथ हरग्ज़ि नहीं बैठ सकता।" इसप्रकार वे एक दूसरे के साथ ठीक तरह से बात भी करना नहीं चाहते।

(10) गांधीवाद की पराजय :–

गांधीजी चाहते थे कि हिन्दु–मुस्लिमों में एकता बनी रहे और देश का विभाजन ना हो। आप सत्य, अहिंसा, दया, शांति, परस्पर सौहार्द आदि बातों पर विश्वास रखते थे, परंतु आपकी लाख कोशिशों के बावजूद भी भारत–पाकिस्तान अलग हुए और

साम्प्रदायिकता से ग्रस्त लोगों ने आपकी हत्या भी कर दी। 'तमस' उपन्यास साम्प्रदायिक खूनी दंगे, भय, हिंसा, मारकाट, आशंका, दमन, अत्याचार से भरा हुआ है। और यह उपन्यास पूरी तरह गांधीवाद की पराजय ही दिखाता है। गांधीजी का कहना था कि उनके जीते जी पाकिस्तान नहीं बनेगा, बनेगा तो उनकी लाश पर ही बनेगा। गांधीजी के इन्ही विचारों से प्रभावित होनेवाला चरित्र जनरैल 'तमस' में चित्रित किया है। जनरैल भी नारा लगता है कि पाकिस्तान उसकी लाश पर ही बनेगा। देश विभाजन का विरोध करनेवाले जनरैल की भी हत्या की जाती है। शहर में जब साम्प्रदायिक दंगे हो रहे थे तब अकेला जनरैल हिन्दू-मुसलमानों को अमन कायम रखने का संदेश दे रहा था। वह नारा लगा रहा था कि, "पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा। हम एक हैं। हम भाई-भाई हैं, हम मिलकर रहेंगे।" तभी आसपास जमीं भीड में से किसी ने एक ही घाव में जनरैल की खोपडी फोड़ दी। गांधी की तरह ही जनरैल की भी हत्या हिंसा ने ही की। 'तमस' में अन्य कार्यकर्ता भी सिगरेट, बियर पीते हैं, चुनावी टिकट के लिए पैसा और शक्ति का प्रदर्शन करते है, ऊपर से खादी और अन्दर से रेशम पहनते है। उपन्यास में ये सभी बातें गांधीवाद की पराजय ही दिखाते हैं।

(11) प्रशासन की निर्मम तटस्थता :-

प्रशासनिक अफसर लोगों को सामान्य जनता के सुख-दु:ख से कोई वास्ता नहीं होता। ऐसे प्रशासन तथा अफसरों की निर्मम तटस्थता का वर्णन भीष्म साहनी जी ने अपने उपन्यासों में किया है। इस दृष्टि से भीष्मजी का 'तमस' उपन्यास महत्वपूर्ण हैं। प्रशासन के अधिकारी सामान्य जनता के प्रति निर्मम तटस्थता दिखाते हैं। 'तमस' उपन्यास का डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड भी सामान्य जनता के प्रति निर्मम तटस्थता दिखाता है। अगर वह चाहता तो कर्फ्यू लगाकर या हवाई जहाज के आवाज से शहर में साम्प्रदायिक दंगे रोक सकता था, लेकिन वह यह सब बातें टाल देता है, मानो उसे हिन्दू-मुसलमानों की बरबादी से कोई वास्ता नहीं था। गाँव में जहाँ पर एक कुएँ में अनेक स्त्रियों ने अपने बच्चों के साथ कुदकर आत्महत्याएँ की थी, वह जगह रिचर्ड को एक पिकनिक स्पॉट लगती है। वहाँ पर भी उसे लार्क पक्षी की आवाज

सुनाई देती है। इस संबंध में उसकी पत्नी लीजा उसे जब पूछती है तो रिचर्ड उसे कहता है, "इसमें कोई विशेष बात नहीं है, लीजा, सिविल सर्विस हमें तटस्थ बना देती है। हम यदि हर घटना के प्रति भावुक होने लगे तो प्रशासन एक दिन भी नहीं चल पायेगा।"

"यदि 103 गाँव जल जाये तो भी नहीं ?"

"तो भी नहीं" रिचर्ड ने तनिक रुककर कहा, "यह मेरा देश नहीं है। न ही ये मेरे देश के लोग है।"[47] डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड सारे निर्णय अंग्रेजों के हित में लेता है। 103 गाँव जल जाने पर भी वह निर्मम बनकर प्रशासक की ही भूमिका निभाता है। साम्प्रदायिक दंगों में सब कुछ हो जाने के बाद वह गाँव पर हवाई जहाज उडाता है और दंगे रोकता है, परंतु तब तक सब कुछ खत्म हो गया था। इसप्रकार प्रशासन की निर्मम तटस्थता का वर्णन भीष्मजी ने अपने उपन्यासों में किया है।

(12) <u>कम्युनिस्टों की असफलता</u> :-

भीष्म साहनी एक सफल मार्क्सवादी रचनाकार रहे हैं। परंतु भीष्मजी ने अपने विचारों के प्रति तटस्थता दिखाई है। 'तमस' उपन्यास में देवदत्त, राजनाथ, जगदीश, अजीत, सोहनसिंह, हरबन्तसिंह, आदि कम्युनिस्ट पार्टी के पात्र गाँवों तथा शहरों में साम्प्रदायिक दंगे रोकने की कोशिश करते है। देवदत्त का विश्वास है कि मजदूर लोग आपस में कभी नहीं लडते, उच्च वर्ग के लोग धर्म के नामपर उन्हें आपस में लडाते है। कम्युनिस्ट सोहनसिंह भी सिक्ख लोगों को समझा रहा है कि "हमें मुसलमानों के प्रति भडकाया जा रहा है। हमें कोशिश करनी चाहिए कि गाँव के मुसलमानों के साथ मेलजोल बनाए रखे और गाँव में दंगे न होने दे।" परंतु सोहनसिंह की बात कोई नहीं सुनता बल्कि उसे ही गद्दार कहकर सिक्ख लोग उसकी पिटाई करते है। और इस बात का परिणाम यह होता है कि गुरुद्वारे के पास सिक्ख और मुसलमानों का युध्द होता है और उसमें अनेक लोग मारे जाते हैं। अनेक सिक्ख औरते कुएँ में कुदकर जान देती है। कम्युनिस्ट पार्टी का मीरदाद भी लोगों को समझाता है कि अंग्रेज हिन्दु-मुसलमानों को आपस में लड़ा रहे हैं। परंतु बाकी लोग यह बात नहीं मानते।

इसप्रकार सभी कम्युनिस्ट पात्र लोगों को समझाना चाहते है कि अंग्रेज ही हमारा दुश्मन है, हमें आपस में लडा रहा है, लेकिन कुछ सत्तापंथी लोग गन्दी राजनीति खेलकर खूनी, साम्प्रदायिक दंगे पर उतारू हो जाते हैं। यहाँ पर सभी कम्युनिस्ट नेता, कार्यकर्ता तथा पार्टी की पराजय होती है। 'तमस' में कम्युनिस्ट कार्यकर्ता सबको समझाते है कि हिन्दु–मुसलमान भाई–भाई हैं, अंग्रेज हमें आपस में लड़ा रहा है, परंतु बाकी के लोग इन कार्यकर्ताओं को गद्दार समझते हैं। इसप्रकार 'तमस' की अनेक घटनाएँ कम्युनिस्ट पार्टी की असफलता को हमारे सामने प्रस्तुत करती है।

(13) <u>अलगाव की राजनीति</u> :–

'तमस' पढ़ने पर हम सोचते है कि इन सारी घटनाओं के पीछे अंग्रेज सत्ता की कुटिल राजनीति है, लेकिन हिन्दु और मुसलमान दोनों धर्म के लोग भी अपनी-अपनी अलगाव को बढावा देते हैं। मुसलमान मानते हैं कि हिन्दुस्थान की आजादी सिर्फ हिन्दुओं के लिए है और स्वतंत्र पाकिस्तान में ही मुसलमान आजाद होंगे। धर्म के नामपर मुसलमान स्वतंत्र पाकिस्तान की माँग करते हैं।

इसके विपरित आर्यसमाजी स्वतंत्र हिन्दु राष्ट्र का सपना देखते हैं। लाला लक्ष्मीनारायण समझते है कि मुसलमानों को कांग्रेस ने सिर पर चढा रखा है। मुस्लिम लीग भी कांग्रेस को हिन्दुओं की जमात समझते हैं। इसप्रकार हिन्दू और मुसलमान धर्म के नामपर अलगाव की राजनीति बढ़ा रहे हैं। आर्थिक हितों की रक्षा करने के लिए धर्म का उपयोग राजनीति के लिए करते हैं। हिन्दु, मुसलमान, सिक्ख अपनी अपनी राजनीति के लिए धर्म का उपयोग करते हैं और अलगाव की राजनीति को बढ़ावा देते हैं।

(14) <u>स्वतंत्रता जनसामान्य के लिए नहीं</u> :–

अपने सारे उपन्यासों में भीष्म साहनीजी ने एक बात स्पष्ट की है कि भारत को अंग्रेजों से आजादी तो मिली, लेकिन सामान्य जनता के लिए उस आजादी का कोई

मतलब नहीं था। 'तमस' में जब भारत आजाद होने के संकेत मिलते है उस वक्त सामान्य जनता आजादी के प्रति उदासीन हैं। उपन्यास में मजदूर एक दूसरे से आजादी की बात करते हैं परंतु आगे वह यह भी कहते हैं कि 'आजादी आयेतो हमें क्या? हम पहले भी बोझा ढोते थे, आजादी के बाद भी बोझा ढोयेंगे।' उपन्यास में भीष्मजी स्पष्ट करते है कि आजादी जनसामान्य को नहीं मिली, बल्कि अफसर, पूँजीपतियों और बडे बडे राजनेताओं को आजादी मिली है। आजादी का सर्वाधिक लाभ तो इन्हीं लोगों को मिला है।

अंततः हम यह कह सकते है कि भीष्मजी ने राजनीति का स्वार्थी, असंगत और अन्तर्विरोध से भरा चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। राजनेता, पूँजीपति की साँठ गाँठ होने के कारण ये लोग अपने स्वार्थ के लिए धर्म का दुरुपयोग करते हैं। ये लोग राजनीति के खेल खेलकर समाज में साम्प्रदायिकता का जहर फैलाते हैं और उसका उपयोग अपने आर्थिक स्वार्थ और सत्ता बनाए रखने के लिए करते हैं। भीष्मजी ने राजनीति का ऐतिहासिक – सामाजिक परिप्रेक्ष्य में यथार्थ चित्रण किया है। भीष्मजी दिखाते है कि धर्मनिरपेक्षता की सही खोज इतिहास की भौतिक परम्पराओं में संभव है। यही भीष्म साहनी के यथार्थवाद का रुप, गुण और चरित्र हैं।

'झरोखे' और 'तमस' में साम्प्रदायिक यथार्थवाद :–

धर्म और साम्प्रदायिकता का गहरा रिश्ता रहा है। ये धर्म जिन भौगोलिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों से जन्में हैं, उनसे कुछ प्रतिमाएँ, कल्पनाएँ, मूल्यविश्वास और रीति–रिवाज लेकर आए है। साम्प्रदायिकता वास्तविकता के बजाय झूठी अफवाओं और अर्धसत्यों पर विश्वास रखकर जिन्दा रहती है। "यह साम्प्रदायिक रुख वहाँ और खुलकर सामने आता है जहाँ धर्म अपने प्रति संपूर्ण समर्पण की माँग करते हैं।"[48] साम्प्रदायिकता विद्वेष और घृणा जैसे भावों को उत्तेजना और उन्माद के छोर तक ले जाकर मनुष्य को आत्माहीन बनाती हैं और बुध्दि और विचार के खिलाफ विकृत और अर्धसत्य भावों की ऐसी आँधी खडी करती है, जिसमें पैर ओर दिमाग, दोनों जमीन से उखड जाते है। साम्प्रदायिकता अनेक बार धर्म के नाम

पर ही फैल जाती है। वह अपने धर्म को श्रेष्ठ समझकर दूसरे धर्म के लोगों का द्वेष करना सिखाती हैं। साम्प्रदायिक यथार्थवाद में यथार्थवादी रचनाकार साम्प्रदायिक परिवेश और साम्प्रदायिकता की समस्या के विविध पहलुओं का चित्रण करते हैं।

भीष्म साहनीजी ने अपने उपन्यासों में साम्प्रदायिकता का तथा साम्प्रदायिक यथार्थवाद का विस्तृत चित्रण किया हैं। आप के 'तमस' में विस्तृत मात्रा में साम्प्रदायिकता का चित्रण हमारे सामने आता है। साम्प्रदायिक यथार्थवाद के निम्नलिखित पहलू भीष्मजी के उपन्यासों में मिलते हैं –

(1) <u>धार्मिक भावनाएँ और तमस का बीज</u> :–

हिन्दू और मुसलमानों की कुछ ऐसी धार्मिक भावनाएँ है कि जिनके कारण साम्प्रदायिकता को बढ़ावा मिलता है। इस्लाम धर्म में सुअर को अपवित्र माना जाता है। उसे शैतान का रुप माना जाता है। सुअर को मारना तथा मांस खाना इस्लाम धर्म के खिलाफ है। इसीतरह हिन्दू धर्म में गाय को पवित्र माना जाता है। हिन्दू लोग समझते हैं कि गाय में तैतीस करोड देवी–देवताएँ रहते हैं, इसीकारण हिन्दू गाय को पवित्र मानकर उसकी पूजा करते हैं। हिन्दू शास्त्र में गोहत्या को ब्रह्महत्या समझा जाता है। इस्लाम और हिन्दू धर्म की इन्हीं धार्मिक भावनाओं के आधारपर भीष्मजी ने 'तमस' का निर्माण किया है। 'तमस' के प्रारम्भ में ही नत्थू एक सुअर को मार रहा है। मुरादअली नामक अंग्रेजों के कारिन्दे ने नत्थू को सुअर मारने के लिए कडकडाता पाँच रुपये का नोट देकर कहा था, "हमारे सालोतरी साहिब को एक मरा हुआ सुअर चाहिए, डाक्टरी काम के लिए।" ..."इधर पिगरी के सुअर बहुत घूमते हैं, एक सुअर को इधर कोठरी के अन्दर कर लो और उसे काट डालो।"[49] बाद में नत्थु द्वारा मारा गया सुअर केलो की मस्जिद की सीढियों पर पाया जाता है। सुअर देखकर मुसलमान समझते हैं कि यह हिन्दुओं की करनी है। इसके परिणाम स्वरुप शहर में एक गाय की हत्या हो जाती है। दोनों धर्म के लोग एक–दूसरे के खिलाफ भडक उठते हैं और अंत में साम्प्रदायिक दंगों की लपेट में सारा शहर आ जाता है।

इसप्रकार हिन्दू–मुस्लिमों की धार्मिक भावनाओं के आधारपर ही भीष्मजी ने अपने उपन्यास तमस का बीज बोया हैं।

(2) <u>हिन्दू–मुसलमान–सिक्खों के रहन–सहन, खानपान में धार्मिक अंतर</u> :–

'तमस' में भीष्मजी ने हिन्दू–मुसलमान–सिक्ख लोगों के रहन–सहन तथा खानपान में भी अंतर दिखाया है। रिचर्ड की पत्नी लीजा जब उसे पूछती है कि तुम हिन्दू और मुसलमान को कैसे ~~पच्छान~~ पहचान लेते हो तो रिचर्ड उसे कहता है, "बडा आसान है, लीजा। मुसलमानों के नामों के अन्त में अली, दीन, अहमद, ऐसे–ऐसे शब्द लगे रहते हैं जबकि हिन्दूओं के नामों के पीछे ऐसे शब्द जैसे लालचन्द, राम लगे रहते हैं। रोशनलाल होगा तो हिन्दू, रोशनदीन होगा तो मुसलमान, इकबालचन्द होगा तो हिन्दू, और जो इकबाल अहमद होगा तो मुसलमान।"[50] ...... "सभी सिखों के पीछे सिंह लगा रहता है।" रिचर्ड ने कहा। सिख लोग अपनी दाढी को कभी भी तराश नहीं सकते, यह उनके धर्म के खिलाफ है। रिचर्ड फिर हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख लोगों के खानपान के बारे में लीजा को बताता हैं कि, "जैसे यह कि सिक्खों के पाँच निशान होते हैं, बालों के अलावा चार चिह्न और हैं, हिन्दुओं के सिर पर चुटिया होती है, और मुसलमानों के भी अपने निशान होते हैं। फिर खान–पान में भी। हिन्दू गाय का मांस नहीं खाते, और मुसलमान सुअर का मांस नहीं खाते, सिक्ख लोग झटके का मांस खाते हैं, जबकि मुसलमान लोग हलाल का मांस खाते हैं ..."[51]

इसप्रकार 'तमस' में हिन्दू, मुसलमान, सिक्खों की धार्मिकता से प्रभावित खान–पान रहन–सहन आदि का सहारा लेकर जो साम्प्रदायिकता फैलती है तथा फैलायी जाती है, उसका वर्णन किया गया है।

'झरोखे' में भी घर में एक अलग जगह पर कुछ बर्तन रखे जाते हैं जो सिर्फ मुसलमान व्यापारियों के खान–पान के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं, और बाद में उन्हें गरम राख में माँजा जाता है। "रसोईघर के बाहर एक आले में दो चीनी की प्लेटें, दो फूलदार प्याले, और एक नमूने की चायदानी रखे रहते हैं। इनमें हम कभी भी खाना नहीं खाते। ये सदा वहीं

पर पड़े रहते हैं। ये मुसलमान व्यापारियों के लिए हैं। इनमें मुसलमान व्यापारियों को खाना और चाय दी जाती है, ओर जब वे चले जाते हैं तो माँ इन्हें जलते अंगारों ओर गरम राख में साफ करती है और फिर इन्हें आले में रख देती है।"[52]

इसप्रकार विभिन्न धर्मों के खान–पान, रहन–सहन में जो फर्क होता है उसमे भी साम्प्रदायिकता बढ जाती है। बच्चों के मन में अपने धर्म के प्रति आदर और दूसरों के धर्म के प्रति घृणा निर्माण होती है और इससे ही साम्प्रदायिकता को बढ़ावा मिलता है।

(3) इतिहास का अर्धसत्य ज्ञान :–

हिंदू–मुस्लिम लोग अपने इतिहास का पूर्ण ज्ञान नहीं रखते। ये लोग अपने इतिहास को जानते नहीं, उसे जीते भर हैं। 'तमस' में रिचर्ड अपनी पत्नी लीजा को बताता है कि "जो लोग मध्य–एशिया से सबसे पहले यहाँ आये, शताब्दियों के बाद उन्हीं के नाते–पोते अन्य देशों से इधर आये। नस्ल सबकी एक ही थी। वे लोग जो आर्य कहलाते थे और हजार वर्ष पहले यहाँ पर आये, और वे जो मुसलमान कहलाते थे ओर लगभग एक हजार वर्ष पहले यहाँ आये–एक ही नस्ल के लोग थे। सभी एक ही जाति के लोग थे।"[53] इन सब बातों को हिन्दू तथा मुस्लिम नहीं जानते। रिचर्ड आगे कहता है, "यहाँ के लोग कुछ नहीं जानते। ये वही कुछ जानते हैं जो हम इन्हें बताते हैं।" ... "ये लोग अपने इतिहास को जानते नहीं हैं, ये केवल उसे जीते भर हैं।"[54] इसप्रकार हिन्दू और मुसलमानों एक नस्ल के लोग होते हुए भी एक दूसरे के खिलाफ लड़ते हैं। वे अपने इतिहास को नहीं जानते। ये लोग इतिहास को साम्प्रदायिकता के नजर से देखते हैं। हिन्दू लोग अपना अलग इतिहास बताते हैं जो वेद, सनातनी धर्म और मुसलमानों के आक्रमण के मुकाबले से संबंधित है। मुसलमान भी अपना अलग इतिहास बताते हैं जो इस्लाम धर्म के हिन्दुस्तान पर आक्रमण, प्रचार, प्रसार से संबंधित हैं। इतिहास के अर्धसत्य ज्ञान के कारण ही ये लोग आपसी लडाइयों को ऐतिहासिक लडाइयों की श्रृंखला मानते हैं। हिन्दू – सिक्ख – मुसलमान समझते हैं कि उनका संघर्ष मध्ययुग

से चला आ रहा है और 1947 में हुए हिन्दू – मुसलमान – सिक्खों का संघर्ष उसी की एक कड़ी है। अपनी धार्मिक अंधता से उठकर इतिहास को देखने को ये तीनों धर्म तैयार नहीं हैं।

(4) धार्मिक असहिष्णुता :–

धर्म हमें आपसी भाईचारा, दया, क्षमा, शांति, सद्भाव और सहिष्णुता का उपदेश देता है, परंतु धर्म का साम्प्रदायिकरण होने के कारण हिन्दू मुस्लिम लोग असहिष्णु हो गये हैं। 'तमस' में जब मस्जिद के सामने मरा हुआ सुअर देखकर मुस्लिम लोग बिना कुछ सोचे समझे वह हिन्दूओं का काम समझते हैं और बदले में एक गाय की हत्या करते हैं। और इन घटनाओं का परिणाम यह होता है कि साम्प्रदायिक दंगे प्रारम्भ होते हैं। एक दूसरे के प्रति शक, आशंका, अविश्वास इन दंगों की आग में घी का काम करते हैं। साम्प्रदायिक दंगों के कारण अब मुसलमानों के मुहल्ले में हिन्दू नहीं जा सकते ओर न हिन्दुओं के मुहल्ले में मुसलमान जा सकते हैं। शहर में अनेक अफवाहें उठती हैं ओर उन अफवाहों में 'हर हर महादेव' और 'अल्ला – हो – अकबर' की गूँजों में सारा शहर, साम्प्रदायिकता की आग में जल उठता है। एक एक हत्या का बदला सैकडों हत्याओं से लिया जाता है।

(5) धर्मान्धता और धार्मिक उन्माद :–

धार्मिक असहिष्णुता के कारण लोग धर्मान्ध बन गये हैं। 'तमस' में सामाजिक सत्संग में आर्य समाज के वानप्रस्थीजी अपनी ऊँची–मर्मभेदी आवाज में पंक्तियाँ सुनाते हैं,

"फैलाये घोर पाप यहाँ मुसलमीन ने
नेअमत फलक ने छीन ली, दौलत जमीन ने।"[55]

वानप्रस्थजीने इन पंक्तियोंद्वारा हिन्दुओं की साम्प्रदायिकता को बेनकाब किया है। हिन्दु समझते हैं कि मुसलमान भारत आनेपर ही देश में पतन, दुर्दशा, शुरु हुई। इससे पहले भारत में रामराज्य था, सोने का धुआँ निकलता था। वानप्रस्थीजी हिन्दुओं की भावनाओं को मुसलमानों के खिलाफ भडकाते हैं। रक्षा के लिए घरों में कोयला, उबलता तेल, जलते अंगारे

घर में रखने के लिए कहा जाता हैं। यही वानप्रस्थीजी यह धमकी भी देते हैं कि, –"गोवध हुआ तो खून की नदियाँ बहेंगी।" अंतरंग सभा के सदस्यों को मुहल्ला कमीटियाँ नाकाम लगती है क्योंकि सभी मुहल्लों में हिन्दू–मुसलमान दोनों रहते हैं। मुसलमानों पर आक्रमण करने के लिए शास्त्रागार में असला इकठ्ठा किया जाता है।

मास्टर देवव्रत भी अपनी दीक्षा पध्दति में मुर्गी मारने का प्रशिक्षण देता है जिससे आसानी से मुसलमानों को मारा जा सके। रणवीर जैसे भोले भाले युवकों को जिंदा मुर्गी मारने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसप्रकार युवकों को धर्मान्ध बनाया जाता है। ठीक से मुर्गी न मार सकनेवाला रणवीर बाद में गरीब इत्रफरोश को चाकू भोंककर मार देता है। सिक्ख धर्म के लोग भी तुर्कों के खिलाफ लड़ने के लिए गुरुद्वारे में इकठ्ठा होकर हत्यार जमा करते हैं। अपने अपने लडाई के दाँव–पेच वे मुसलमानों पर चलाना चाहते थे। उधर मुसलमान लोग भी रहीम तेली के घर में लडाई के लिए असला इकठ्ठा कर रहे हैं। मुसलमानों ने दूसरे गाँव के मुसलमानों को भी खबर भेजी है कि असला लेकर मदद के लिए पहुँचे।

इसतरह धार्मिक उन्मादग्रस्त हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख अपना असला इकठ्ठा करके धार्मिक जेहाद की तैयारी में लगे हैं।

(6) <u>साम्प्रदायिक घृणा का स्वरुप</u> :–

भीष्म साहनी ने अपने उपन्यासों में साम्प्रदायिक घृणा का स्वरूप स्पष्ट करते हुए हमें बताया है कि साम्प्रदायिक घृणा का शिकार अक्सर गरीब ही होता है। इसी बात को भीष्मजी ने अपने उपन्यास "तमस" में भी स्पष्ट किया है। मुसलमान शाहनवाज लाला लक्ष्मीनारायण के जान माल की रक्षा करता है क्योंकि दोनों एक ही आर्थिक वर्ग के हैं, परंतु शाहनवाज अपनी हिंदुओं के प्रति होनेवाली साम्प्रदायिक घृणा नौकर मिल्खी पर निकालता है। हिंदू महासभा में भोले भाले युवकों में मुस्लिमों के प्रति घृणा पैदा की जाती है। उन्हें बताया जाता है म्लेच्छ कोन हैं। इसीप्रकार मुसलमानों के मन में भी हिन्दुओं के प्रति घृणा निर्माण करता है, परंतु महत्वपूर्ण बात यह है कि यह घृणा गरीबों के साथ जुडी है। इस साम्प्रदायिकता के बली होते है सिर्फ गरीब लोग जैसे – इत्र बेचनेवाला

गरीब इत्रफरोश, हरनामसिंह, इकबालसिंह, जनरैल, मिल्खी, आदि। लाला लक्ष्मीनारायण, शाहनवाज, रघुनाथ, सोहनी, नूरइलाही आदि हिन्दु मुस्लिम पात्र साम्प्रदायिक होते हुए भी अपने व्यापारी तथा आर्थिक स्वार्थ के लिए एक हैं। इनकी साम्प्रदायिक घृणा का शिकार तो सामान्य हिन्दु-मुस्लिम लोग होते हैं।

भीष्मजी के 'झरोखे' में भी इस घृणा का कुछ मात्रा में चित्रण किया हैं। एक ओर बच्चों के मन में मुसलमानों के प्रति घृणा पैदा की जाती है, वहीं दूसरी ओर पिताजी व्यापारी मुसलमानों के साथ हँसकर बातें करते हैं, उनकी ठुड्डी को हाथ लगाते है। घर में बच्चों को बताया जाता है कि मुहल्ले के मुसलमान म्लेच्छ हैं, वे बकरे की सिरी भूनते हैं, हिन्दुओं के खोमचे लूट लेते हैं, उनके बच्चे इश्कियाँ गीत गाते हैं और गन्दी गालियाँ देते हैं, इसलिए पिताजी अपने बच्चों को उनके साथ खेलने नहीं देते।

इसप्रकार साम्प्रदायिक घृणा के कारण ही साम्प्रदायिक दंगे होते हैं और उसमें पूँजीपति लोग बच जाते हैं और इस साम्प्रदायिक घृणा के शिकार होते हैं सामान्य, गरीब हिन्दु-मुसलमान लोग।

(7) राजनीति का साम्प्रदायिकरण :-

हिन्दु, सिक्ख और मुसलमान धर्म के लोगों ने भारत देश में राजनीति का साम्प्रदायिकरण किया, जिसके परिणामस्वरुप भारत देश का विभाजन होकर भारत-पाकिस्तान दो अलग अलग राष्ट्र निर्माण हो गये। परिणामस्वरुप साम्प्रदायिक दंगे भी हुये, परंतु निश्चित रुप से कहा नहीं जा सकता कि देशविभाजन की घटना के दरम्यान राजनीति का साम्प्रदायिकरण करने के लिए निश्चित रुप में कौन जिम्मेदार है। भीष्म साहनीजी ने 'तमस' में राजनीति के साम्प्रदायिकरण का वर्णन किया है। कँाग्रेस अपनी प्रभात फेरी के समय नारे लगाते है -

"कौमी नारा।"

"वंदे मातरम्।"

"बोल भारतमाती की - जय।"

"महात्मा गांधी की जय।"

इसके बाद सहसा केवल क्षण–भर की चुप्पी के बाद कुछ ही दूरी पर जहाँ एक ओर गली इस गली को कट गयी थी, एक और नारा उठा –

"पाकिस्तान – जिन्दाबाद

पाकिस्तान – जिन्दाबाद ।

कायदे आजम – जिन्दाबाद ।

कायदे आजम – जिन्दाबाद ।"[56]

मुस्लिम लोग समझते हैं कि कांग्रेस हिंदुओं की जमात है। तो हिंदु समझते हैं कि मुस्लिम लीग मुस्लिमों की जमात हैं। महमूद साहब तो स्पष्ट रुप में कहते हैं कि मुस्लिमों को हिन्दू के कुत्तों से नफरत है जो हिन्दुओं के पिछे दूम हिलाते फिरते हैं। रिचर्ड के पास जब सभी मिलकर जाते हैं तो वहाँपर भी मुसलमान हयातबख्श कहता है कि, "मस्जिद में सुअर फेंकना हिन्दुओं की शरारत हैं।" तो गुस्से से लक्ष्मीनारायण भी बताते हैं कि किसप्रकार मस्जिद में असला इकठ्ठा किया जा रहा है ओर गाय को भी मारा गया है। लक्ष्मीनारायण और हयातबख्श दोनों मुस्लिम लीग और आर्यसमाज से संबंधित व्यक्ति हैं। शांति स्थापित करने के लिए जब बस में बैठकर जाना तय होता है तो देवदत्त कहता है कि "मुस्लिम लीग, कांग्रेस ओर गुरुद्वारा प्रबन्धक समिति के कुछ सदस्य बस में सँवार हो। तो लाला लक्ष्मीनारायण उठकर कहते हैं कि, "मुझे यह देखकर अजहद रंज हो रहा है कि आपने तीन सियासी पार्टियों के नाम तो गिनाये, लेकिन हिन्दू सभा को बिलकुल भूल गये। क्या वह सियासी पार्टी नहीं है?"[57]

इसप्रकार हम देखते हैं कि हिन्दु, मुस्लिम, सिक्खों ने राजनीति का साम्प्रदायिकरण करके देश को गलत दिशा की ओर मोड दिया। और इसके परिणामस्वरुप भारत–पाकिस्तान का निर्माण और साम्प्रदायिक दंगे हो गए।

(8) प्रशासन में साम्प्रदायिक तत्व :-

हिन्दु, मुसलमान तथा सिक्ख लोगों द्वारा फैलायी गयी साम्प्रदायिकता जीवन के हर अंग में नजर आती है। प्रशासन जैसा क्षेत्र भी साम्प्रदायिकता से नहीं बचा है। 'तमस' का मुरादअली जाति से मुसलमान हैं, मुस्लिम लीग का काम करता हैं साथ ही म्युनसिपल कमेटी का कारिन्दा भी है। यही मुरादअली झुठ बोलकर नत्थु से सुअर मरवाता हैं और सुअर को मस्जिद के सामने फेंक देता हैं। इसीकारण साम्प्रदायिक दंगे भडक उठते हैं। यही मौलादाद मुस्लिम लीग का कारकून है, और बिजली कम्पनी में क्लर्क भी है। यही मौलादाद कहता है कि "मुसलमान का दुश्मन हिन्दु नहीं बल्कि वह मुसलमान है जो हिन्दुओ के पिछे कुत्तों की तरह दुम हिलाते फिरते हैं। उनके टुकडों पर पलते हैं।"

इसप्रकार हम देखते हैं कि 'तमस' में हिन्दु ओर मुस्लिम साम्प्रदायिकताने प्रशासन में भी प्रवेश किया है।

(9) जबरदस्ती से धर्मपरिवर्तन :-

परम्परा से आज तक जबरदस्ती धर्मपरिवर्तन किये जाने की परंपरा चली आ रही है। जब भारत पाकिस्तान का विभाजन हुआ उस समय साम्प्रदायिकता की आग जल रही थी। अनेक लोगों का जबरदस्ती से धर्मांतर किया जा रहा था। इस्लाम धर्म के लोगों की नजर में दूसरे जातीवाले काफिर हैं। उनकी दृष्टि में काफिर को मारना या उसे इस्लाम धर्म से दीक्षित करना अल्लाह का पवित्र काम हैं। 'तमस' में भी इकबालसिंह का जबरदस्ती धर्मपरिवर्तन कर उसे मुस्लिम बनाया जाता है। इकबालसिंह को पकडकर मुस्लिम बस्तीपर लाया जाता है। वहाँपर उसे जबरदस्ती से मांस खिलाया जाता हैं। "शाम ढलते-ढलते इकबालसिंह के शरीर पर से सिखी की सब अलामतें दूर की गयी थी और मुसलमानी की सभी अलामतें उतर आयी थी। पुरानी अलामतें हटाकर नयी अलामतें लाने की देर थी कि इनसान बदल गया था, अब वह दुष्मन नहीं था, दोस्त था, काफिर नहीं था, मुसलमान था। मुसलमानों के सभी दरवाजे उसके लिए खुल गये थे।"[58] अर्थात् इकबालसिंह का धर्मपरिवर्तन उसकी इच्छा के विरुध्द जोर, जबरदस्ती, और क्रूरता के साथ किया गया था।

(10) धार्मिक क्रूरता :–

देशविभाजन के समय धर्मिक क्रूरता और बीभत्सताने औरतों और बच्चों को भी अपना शिकार बनाया। अनेक लोगों का जबरदस्ती धर्मांतरण किया गया। अनेक औरतों ने अपने बच्चों के साथ कुएँ में कूदकर आत्महत्यायें की। मुस्लिम धर्म के लोगों ने अनेक औरतों पर अत्याचार किये। अनेक लोगों का धर्मांतरण किया, और अनेक लोगों की क्रूरता से हत्याएँ की। 'तमस' में धार्मिक क्रूरता के कुछ उदाहरण मिलते हैं। तमस में भीष्मजी ने एक जगह पर प्रसंग चित्रित किया है, मुसलमान लोग अपने कारनामों के किस्से एक दूसरे को सुना रहे थे। एक मुजाहिद सुना रहा था, "हम जब गली में घुसे तो कराड़ भागने लगा, कोई इधर जाये, कोई उधर जाये। हिन्दुओं की एक लड़की अपने घर की छत पर चढ गयी। हमने देख लिया जी। सीधे दस–बारह आदमी उसके पीछे छत पर पहुँच गये। वह छत की मुँडेर लाँघकर दूसरे घर की छत पर जा रही थी जब हमने उसे पकड लिया। नबी, लालू, मीरा, मुर्तजा, बारी–बारी से सभी ने उसे दबोचा।

"ईमान से?" एक ने संशय से पूछा।

"कसम अल्लाह पाक की। जब मेरी बारी आयी तो नीचे से न हूँ, न हाँ, वह हिले ही नहीं, मैंने देखा तो लडकी मरी हुई।" और वह खोखली–सी हँसी हँसकर बोला, "मैं लाश से ही जना किये जा रहा था।"[59]

जबरदस्ती से धर्मांतर, औरतों पर अत्याचार, खून आदि घटनाएँ देश विभाजन के समय आम हो गयी थी। इसप्रकार साम्प्रदायिकता का परिणाम भीष्मजी ने धार्मिक क्रूरता में दिखाया हैं।

(11) अमानवीयता :–

मानव जब साम्प्रदायिकता की आग की लपेट में आता है तो मानव नहीं रहता। यही साम्प्रदायिकता जब हद से बढ जाती है तो वह अमानवीयता का रुप धारण करती हैं। अमानवीय रुप में साम्प्रदायिकता अपना अत्यंत घृणास्पद रुप दिखाती हैं। भीष्म साहनीजी ने अपने 'तमस' में अनेक अमानवीय घटनाओं का चित्रण किया हैं। साम्प्रदायिक दंगों के समय

औरतों का बच्चों के साथ कुएँ में कुदना, गरीब इत्रफरोश मुसलमान की रणवीर द्वारा हत्या, इकबालसिंह का जबरदस्ती से धर्मांतर, अनेक औरतों पर बलात्कार, आदि अनेक ऐसी घटनाएँ हो जो अमानवीयता का साक्षात्कार कराती हैं। साम्प्रदायिक दंगों के बाद अनेक लोग बेघर होकर राहत शिबीरों में एकत्रित आते हैं। भारत-पाकिस्तान विभाजन के बाद मानव के बदलते सम्बन्धों में जो अन्तर पड़ता जा रहा था, उस अंतर को उपन्यासकार भीष्म साहनी ने बड़ी बारीकी से देखकर उसेअपने उपन्यास में चित्रित किया हैं। "बँटवारे के दरमियान नफरत एक ऐसे पैमाने पर पहुँच गयी थी, जहाँ न सिर्फ ज़मीन की बाँट थी, मानवीय सम्बन्धों के टूटने खत्म हो जाने की तिडकन और घूटन भी थी।"[60]

साम्प्रदायिकता की अमानवीयता ने वात्सल्य का भी गला घोंट दिया था। दंगा-फिसाद के समय पंडित-पंडिताईन की लडकी प्रकाशों को कोई उठाकर ले जाता है। अंत में दंगा फिसाद समाप्त होनेपर उन्हें बताया जाता है कि उनकी बेटी मिली है उसे जाकर वे ले आये। इसपर ब्राह्मणी बोल पडी, "अब हमारे पास आकर क्या करेगी जी, बुरी वस्तु तो उसके मुँह में उन्होंने पहले से ही डाल दी होगी ।" इस पर पंडित बोला, "हमसे अपनी जात नहीं सँभाली जाती बाबूजी, दो पैसे जेब में नहीं है, उसे कहाँ से खिलायेंगे, खुद क्या खायेंगे ।"[61] यहाँ पर पंडित, पंडिताईन की अपनी बेटी के प्रति इतनी कठोरता देखकर शायद ही कोई विश्वास करे कि माँ-बाप अपनी संतान के प्रति इतने उदास हो जाते हैं। साम्प्रदायिकता के नामपर हिन्दू लोगों ने अपने वात्सल्य को भी नकारा हैं।

साम्प्रदायिक यथार्थवाद के उपर्युक्त पहलूओं के अलावा हिन्दू, सिक्ख, मुस्लिम धर्म ने भी साम्प्रदायिकता को बढाने में योगदान दिया है। हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता सिध्द करने की मुद्रा में आर्यसमाज उभरने लगा था। आर्यसमाज के इस प्रकार के कार्य के कारण ही धार्मिक अलगाव की वृत्ति बढ़ने लगी। मुस्लिम मानसिकता को भड़काने का कार्य आर्यसमाज ने किया। 'तमस' में वानप्रस्थीजी, देवव्रत, लाला लक्ष्मीनारायण, रणवीर आदि अनेक ऐसे पात्र हैं जो आर्यसमाज से संबंधित हैं। ओर आर्यसमाजी विचारधारा का प्रतिनिधत्व करते हें। 'झरोखे' में भी

पूरा परिवार आर्यसमाजी है और मुस्लिमों के प्रति घृणा व्यक्त करता हैं। आर्यसमाज के साथ साथ मुस्लिम लीग भी साम्प्रदायिकता को बढावा देने में अग्रेसर थी। "पंजाब में मुस्लिम गार्डस् की स्थापना हो चुकी थी। अलगाव बढ़ाना, नफरत के जहर को फैलाना यही लीग का कार्य था।"[62] सिक्ख समाज में भी मुस्लिमों के खिलाफ लड़ना धार्मिक कर्तव्य माना जाता हैं। सिक्ख मूलतः लड़ाकू रहे हैं। अपनी अविवेकी धार्मिक कट्टरता के कारण सिक्ख पूरे दो दिन लगातार रात–दिन लड़ते रहें, परंतु आखिर में बरबाद हो गए।

इसप्रकार देश विभाजन की घटना को लेकर भीष्मजी ने अपने उपन्यास में साम्प्रदायिक यथार्थवाद का विस्तृत चित्रण किया हैं। इसमें धार्मिक असहिष्णुता, अमानवीयता, धार्मिक कट्टरता, धार्मिक उन्माद, परस्पर द्वेष, घृणा, जबरदस्ती धर्मपरिवर्तन, देशविभाजन, अलगाव का विस्तृत चित्रण किया हैं। सभी धर्मो के तत्व अच्छे है, लेकिन धर्म के नामपर साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देकर राजनेता और पूँजीपति लोग अपना धार्मिक और सत्ता का स्वार्थ देखते हैं। और साम्प्रदायिकता का शिकार हमेशा सामान्य वर्ग ही होता हैं। जो लोग साम्प्रदायिकता का शिकार होते हैं, आपस में लडते–झगडते हैं उनका कोई फायदा नहीं होता लेकिन सामान्य जनता के झगडों का फायदा हमेशा दूसरे लोग ही उठाते हैं। और इस परिस्थिति का चित्रण ही भीष्म साहनीजी ने अपने उपन्यास "झरोखे" और "तमस" में किया हैं। ये दोनों उपन्यास सामाजिक यथार्थवाद (झरोखे), राजनीतिक यथार्थवाद (तमस), साम्प्रदायिक यथार्थवाद (तमस, झरोखे) की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

सांदर्भ

1. यथार्थवाद – शिवकुमार मिश्र, पृष्ठ 9
2. वही, पृष्ठ 6
3. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद – डॉ. त्रिभुवनसिंह, पृष्ठ 46
4. वही, पृष्ठ 47
5. वही, पृष्ठ 47
6. यथार्थवाद – शिवकुमार मिश्र, पृष्ठ 10
7. वही, पृष्ठ 141
8. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद – डॉ. त्रिभुवनसिंह, पृष्ठ 46
9. वही, पृष्ठ 47
10. हिन्दी उपन्यास, समाजिक संदर्भ – डॉ. बालकृष्ण गुप्त, पृष्ठ 210
11. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद – डॉ. त्रिभुवनसिंह, पृष्ठ 44–45
12. हिन्दी उपन्यास – सामाजिक सन्दर्भ – डॉ. बालकृष्ण गुप्त, पृष्ठ 207
13. वही, पृष्ठ 209
14. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद – डॉ. त्रिभुवनसिंह, पृष्ठ 49
15. हिन्दी उपन्यास, सामाजिक सन्दर्भ – डॉ. बालकृष्ण गुप्त, पृष्ठ 208–209
16. साहित्य का विश्लेषण – डॉ. वासुदेव नंदन प्रसाद, डॉ. विश्वनाथ प्रसाद, पृष्ठ 215
17. हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन – डॉ. गणेशन, पृष्ठ 337
18. यथार्थवाद – शिवकुमार मिश्र, पृष्ठ 142
19. वही, पृष्ठ 154–155
20. हिन्दी उपन्यास उद्‌भव और विकास – डॉ. सुरेश सिन्हा, पृष्ठ 23
21. वही, पृष्ठ 23
22. वही, पृ. 23
23. वही, पृष्ठ 27
24. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद – डॉ. त्रिभुवनसिंह, पृष्ठ 39

25. हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास – डॉ. सुरेश सिन्हा, पृष्ठ 29

26. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद – डॉ. त्रिभुवनसिंह, पृष्ठ 49

27. वही, पृष्ठ 239

28. 'झरोखे' – तिसरी आवृत्ती (1999) – भीष्म साहनी, पृष्ठ 233

29. वही, पृष्ठ 107

30. वही, पृष्ठ 41

31. वही, पृष्ठ 90

32. तमस – दसवीं आवृत्ति (पुनर्मुद्रित) 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 233

33. झरोखे – तिसरी आवृत्ति (1999) – भीष्म साहनी, पृष्ठ 58

34. भीष्म साहनी – व्यक्ति और रचना – राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकूर, पृष्ठ 88

35. देशविभाजन और हिन्दी कथासाहित्य – डॉ. सुर्यनारायण रणसुंभे, पृष्ठ 120

36. तमस – दसवीं आवृत्ति (पुनर्मुद्रित) 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 19

37. वही, पृष्ठ 252–253

38. वहीं, पृष्ठ 253

39. देशविभाजन और हिन्दी कथासाहित्य – डॉ. सुर्यनारायण रणसुंभे, पृष्ठ 26

40. तमस – दसवीं आवृत्ति (पुनर्मुद्रित) 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 32

41. वही, पृष्ठ 32

42. वही, पृष्ठ 67

43. वही, पृष्ठ 67

44. वही, पृष्ठ 228

45. देशविभाजन और हिन्दी कथासाहित्य – डॉ. सुर्यनारायण रणसुंभे, पृष्ठ 110

46. हिन्दी उपन्यास, अंतरंग पहचान – डॉ. प्रेमकुमार – पृष्ठ 178–179

47. तमस – दसवी आवृत्ति (पुनर्मुद्रित) 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 233

48. साम्प्रदायिकता के स्त्रोत – सम्पादक अभयकुमार दुबे – पृष्ठ 192–193

49. तमस – दसवीं आवृत्ति (पुनर्मुद्रित) 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 8

50. वही, पृष्ठ 38

51. वही, पृष्ठ 45

52. झरोखे – तिसरी आवृत्ति 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 57

53. तमस – दसवी आवृत्ति (पुनर्मुद्रित) 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 36

54. वही, पृष्ठ 36

55. वही, पृष्ठ 60

56. वही, पृष्ठ 30–31

57. वही, पृष्ठ 256

58. वही, पृष्ठ 210

59. वही, पृष्ठ 214–215

60. देशविभाजन और हिन्दी कथासाहित्य – डॉ. सुर्यनारायण रणसुंभे, पृष्ठ 122

61. तमस – दसवी आवृत्ति (पुनर्मुद्रित) 1999 – भीष्म साहनी, पृष्ठ 244

62. देशविभाजन और हिन्दी कथासाहित्य – डॉ. सुर्यनारायण रणसुंभे, पृष्ठ 106